शक्ति संचय का स्रोत संयम

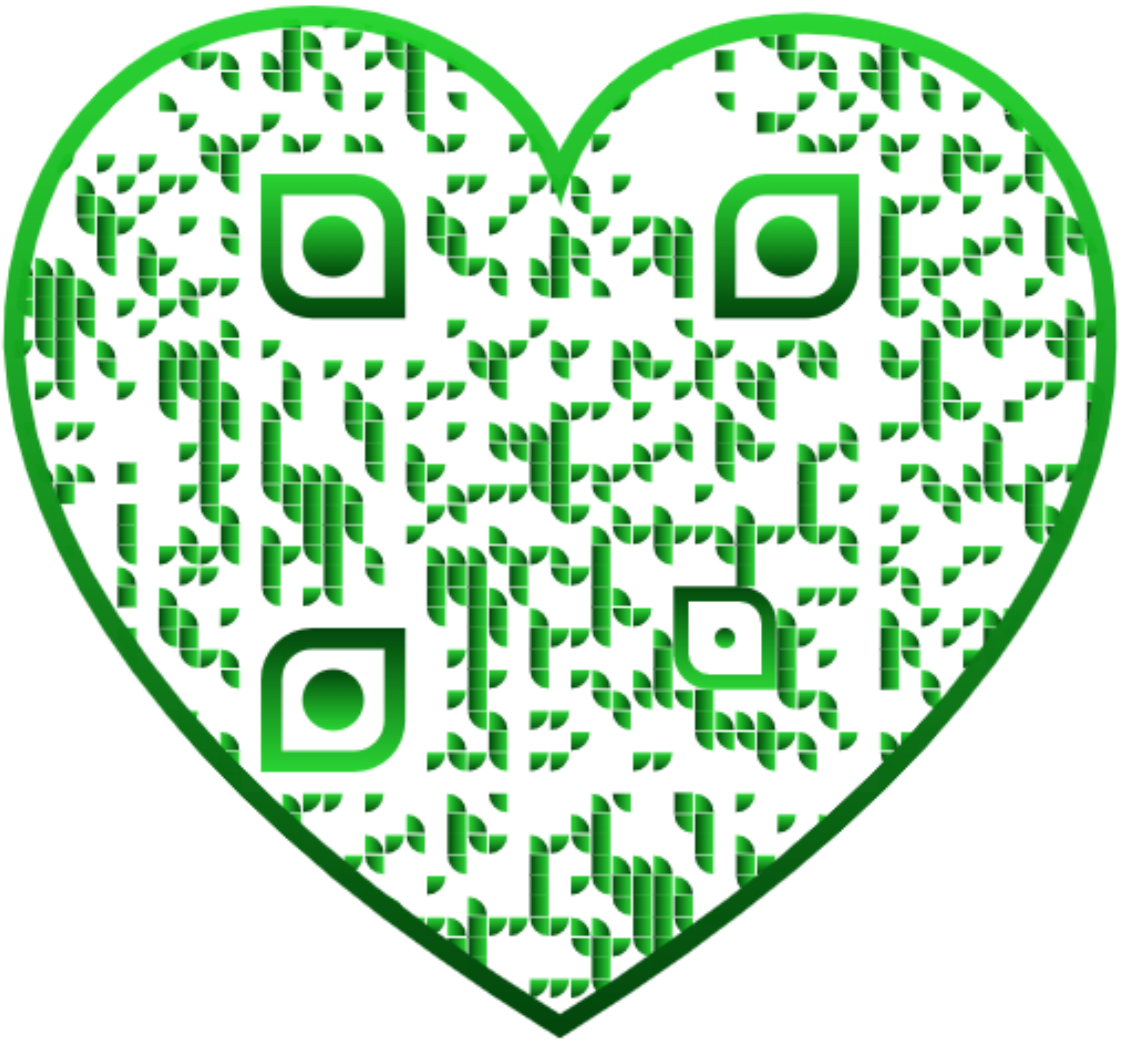

: BOOK MADE AVAILABLE FOR DIGITIZATION BY :

SHRI PRAVINBHAI PANDYA,
ALINDHRA, GUJARAT, INDIA

: OUR MAIN CENTERS :

Shantikunj, Haridwar,
Uttaranchal, India – 249411
Phone no : 91-1334- 260602,
Website : www.awgp.org
E-mail : shantikunj@awgp.org

Gayatri Tapobhumi,
Mathura, U.P., India – 281003
Phone no : 91-0565-2530128,
Website : www.awgp.org
E-mail : yugnirman@awgp.org

: BOOK DIGITIZED BY :

Vicharkranti Pustakalay, Thana-Faliya, Dindoligam, Surat-394210, Gujarat, India
E-mail: vicharkranti.awgp@gmail.com | Website : www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

शक्ति–संचय का स्रोत संयम

लेखक :
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक

युग-निर्माण योजना

गायत्री तपोभूमि

मथुरा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

प्रकाशक—

युग निर्माण योजना
मथुरा (उ० प्र०)

सितम्बर
१९७७

स्रष्टा ने मनुष्य को अनुपम शक्तियों का स्वामी बनाया है, जिनको समुचित रूप में विकसित करके वह सृष्टि का स्वामी तक बन सकता है। पर खेद है कि ऐसी सम्भावनाओं के होते हुए भी करोड़ों मनुष्य पशु सदृश्य जीवन बिता रहे हैं। कारण यही है कि वे अपनी शक्ति—सामर्थ्य को जानते नही या जानकर भी उनका सम्बर्धन करने के लिए उचित संयम और साधना करने को प्रस्तुत नहीं होते। हमारा विश्वास है कि यदि वे इस पुस्तक से मार्ग दर्शन ग्रहण करेंगे तो शक्ति और सफलता के क्षेत्र में प्रगति करके जीवन को सार्थक कर सकेंगे।

मुद्रक—

युग निर्माण प्रेस
मथुरा (उ. प्र.)

मूल्य—

एक रुपया

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

शक्तियों को सार्थक दिशा दें

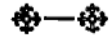

मनुष्य को अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ विभूतियां मिली है। शारीरिक शक्ति सामाजिक और सामूहिक शक्ति में तो वह बढ़ा चढ़ा ही है, शक्ति के अनन्त स्रोत से भी उसका सम्बन्ध इस प्रकार जुड़ा हुआ है कि वह जब चाहें आवश्यकतानुसार अतिरिक्त शक्ति प्राप्त कर लेता है। फिर भी हम अधिकांश लोगों को निर्बलता, अज्ञान और अभावों का रोना रोते हुए देखते है, पाते है कि सृष्टि के अन्य प्राणियों की तुलना में उसका स्वरूप तो नगण्य ही हैं। उससे शक्तिशाली प्राणी कई है। कमजोर प्राणियों की संख्या तो थोड़ी है अन्यथा ऐसे जीव जन्तु और पशु पक्षियों की जातियां तो हजारों की संख्या से ऊपर है जो उसे शरीर बल में पछाड़ सकते है।

शारीरिक दृष्टि से कमजोर होते हुए भी मनुष्य ऐसे साधन विकसित करने में सफल हुआ हैं कि वह संसार का एक छात्र शक्तिशाली अधिपति हो सकता है। एक ओर अभावग्रस्त, दुर्बल और अज्ञानी लोगों की भरभार है तो दूसरी ओर ऐसे महापुरुष भी हुए है जिन्होंने अपनी प्रतिभा के बल पर संसार को एक से एक बढ़ चढ़कर अनुदान दिये। हमारे चारों ओर विज्ञान के जो चमत्कार दिखाई देते है वे सब उन महापुरुषों की ही देन है जिन्होंने अपनी विभूतियों का उपयोग किया और उन्हें इस दिशा में लगाया। एक व्यक्ति सारे समाज की चिन्तनधारा मोड़ देता है तो वह अपने भीतर ऐसी विचारशक्ति अर्जित कर लेता है कि अन्य सभी लोग उसके अनुरूप सोचने लगते है। प्रतिभाशाली और अयोग्य दोनों ही तरह के व्यक्तियों से यह संसार भरा है एक ओर जहाँ ऐसे व्यक्तित्व है जो अपनी शक्ति के द्वारा पूरे समाज की समस्याओं को हल कर सकते हैं तो दूसरी ओर ऐसे लोग भी है जो अपनी साधारण सी कठिनाइयों का निवारण भी नही कर पाते।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

प्रश्न उठता है कि सृष्टि नियन्ता ने लोगों को इस तरह की शक्तियां प्रदान करते समय क्या कोई पक्षपात बरता है ? नहीं, उसने सभी को उस से लाभ उठाने के द्वार खोल रखे हैं और प्रत्येक को यह अवसर दिया है कि वह उस शक्ति का उपयोग अपने तथा समाज के लिए कर सके। साधन और परिस्थितियाँ-महापुरुष तथा साधारण व्यक्तियों के अन्तर का कारण नहीं हैं। महापुरुष भी विपन्न से विपन्न परिस्थितियों में आगे बढ़े है तथा महान कार्य करने में सफल हो सके है। उन सफलताओं का मूलभूत आधार उपलब्ध शक्ति का अभीष्ठ दिशा में सही उपयोग है। वे शक्तियाँ हमें भी प्राप्त हैं, प्रत्येक को उपलब्ध हो सकती हैं लेकिन हम दो कारणों से उनका लाभ उठा नहीं पाते।

पहला कारण तो यह कि व्यक्ति उन शक्तियों को अनावश्यक और अवांछनीय रूप से खर्च कर देते हैं। अनावश्यक और अनुचित कार्यो में शक्तियाँ खर्च कर देने से उनका उपयोग आवश्यक और उचित कार्यो में नहीं हो पाता। साधन सीमित हों और उनसे आवश्यक कार्य किये जाय तो अतिरिक्त साधन भी प्राप्त किये जा सकते हैं, लेकिन सम्मित साधनों को अनावश्यक कार्यों में खर्च कर दिया जाय तो वे साधन समाप्त होंगे ही आगे का स्रोत भी बन्द हो जायगा। उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति व्यवसाय उद्योग प्रारम्भ करना चाहता हो उसकी योजना ठीक हो तथा वह योग्य हो तो पूजी की कमी अन्यत्र से भी पूरी हो जाती हैं। कोई भी सरकारी या गैर सरकारी सहायता मिल सकती है। लेकिन उस पूंजी को वह अपने शौक मौज में ही खर्च करना चाहे तो उसे कोई भी सहायता देने के लिए तैयार नहीं होगा। पास की पूंजी तो समाप्त होगी ही। अपनी उपलब्ध शक्तियों को हम जब अनुचित कार्यों में खर्च करते है तो शक्ति प्राप्त करने की पात्रता खो देते है, हमारे लिए वहां शक्ति का स्रोत बन्द हो जाता है।

अपनी शक्तियों से लाभ न उठा पाने का दूसरा कारण, उन्हे सही दिशा में प्रयुक्त न करना है। वाष्प शक्ति जब इकठ्ठी हो जाती हैं तो उसका उपयोग करना ही पड़ता हैं। यदि उसका उपयोग न किया जाय

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तो बर्तन फट सकता है। कोई नुकसान हो सकता हैं। मानवीय कलेवर में सन्निहित और प्रवाहमान शक्ति का सदुपयोग न किया जाय तो या तो वह कोई हानि पहुँचायेगी अथवा अधोन्मुख होगी। पानी का गुण है, बहना, यदि वह अनियंत्रित बहने लगे तो बड़े बड़े नुकसान हो सकते है, बाढ़ें क्या है ? वर्षा के पानी का अनियंत्रित बहाव ही तो है। और यदि उसे रोक दिया जाय तो अधिक मात्रा में होने पर रुका हुआ पानी विध्वंस उपस्थित कर देगा, कम मात्रा में हुआ तो सड़ांध पैदा कर देगा। इसी प्रकार उपलब्ध शक्ति को सही दिशा से प्रयुक्त कर ही उससे वास्तमिक लाभ उठाया जा सकता है।

उपलब्ध शक्तियों के अनुचित अपव्यय को रोक कर उसे कल्याण-कारी कार्यों में लगाने का नाम ही संयम है। मनीषियों और महापुरुषों ने इसे जीवन का आवश्यक अंग बताया है। अब तक संयम का एकांगी अर्थ ही समझा जाता रहा हैं। अर्थात् शक्तियों के प्रवाह को रोकना। यदि शक्तियों के प्रवाह को रोका जाता रहे उनका कोई उपयोग न किया जाय तो लाभ के स्थान पर हानि है। नदियों का पानी बांध बनाकर रोक दिया जाय, न उससे सिंचाई का काम लिया जाय और न बिजली पैदा की तो एकत्रित होता जा रहा पानी विनाश ही प्रस्तुत करेगा। संयम की अब तक जो एकांगी व्याख्या की जाती रही है, उसी कारण यह अव्यावहारिक सिद्ध होता जा रहा हैं। क्योंकि शक्तियों को प्रवाह की दिशा तो मिलनी ही चाहिए, न मिलेगी तो वे विपरीत परिणाम उपस्थित करेंगी। संयम का अर्थ शक्तियों के प्रवाह को निरर्थक और हानिकारक दिशा से रोक कर सार्थक और कल्याण कर दिशा में लगाना। संयम के इसी स्वरूप को जीवन धर्म कर्तव्य बताया। इस स्तर के संयम कोसिद्ध करने के लिए जितने भी प्रयास किये जायेंगे वे इमारे व्यक्तित्व को उत्कृष्ट और प्रखर बनाते चले जायेंगे। इस सयम के अभाव में उत्कृष्ट जीवन की कल्पना ही नहीं की जा सकती।

कोई भी व्यक्ति शक्तियों के अपव्यय में जानबूझ कर प्रवृत्त नहीं होता। अनजाने या नासमझीसे ही वैसी गल्ती हो जाती है जब तक गल्ती

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

समझ में आती है तब तक इतनी देर हो चुकी होती है कि वे गल्तियां स्वभाव में सम्मिलित हो जाती है। उन अभ्यासअ, ादतों से छुटकारा पाना कठिन हो जाता है। उदाहरण के लिए बच्चा यह नहीं समझता कि क्या खाना चाहिए और क्या नहीं खाना चाहिए। उसके सामने जो भी वस्तुए बार बार रखी जाती हैं वह उन्हे ही पसन्द करने लगता है, वे वस्तुएं ही उन्हें प्रिय लगने लगती है और उन्ही के लिए वे आग्रह करने लगते हैं। बाद में समझ आने पर जब उन वस्तुओं के गुण दोषों का पता चलता है तो मन में इतना साहस उत्पन्न नहीं होता कि उन वस्तुओं के दोषों को समझ कर उन्हें छोड़ दिया जाय या कि चित्त पर स्वाद लिप्साहवी हो जाती है और वह व्यक्ति को असयमी बना देती है।

लिप्सा-जिसे भोगेच्छा भी कहा जाता है–ही असयंम का मुख्य कारण है। महापुरुषों ने इसे जीतने के लिए अनेक तरह से सचेत किया है और समझाया है कि भोगों में मनुष्य को सुख नहीं मिल सकता। गीताकार ने तो कहा है—

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःख योनव एवते।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः ।।

"जो ये इन्द्रिय तथा विषयों के संयोग से उत्पन्न होने वाले सब भोग है वे निःसन्देह दुःख के ही हेतु हैं और अनित्य हैं। हे अर्जुन ! बुद्धिमान विवेकी पुरुषों को उसमें रमण नहीं करना चाहिए।"

मनुष्य जब सुखकी खोजमें इन्द्रिय और विषयों कोसाधन बनाकर प्रयत्न प्रारम्भ करता है,मन,बुद्धि कोभी इसी ओर लगाता है तोइसी प्रयत्न में अनेकों दुःखों का सूत्रपात हो जाता है उसके लिए। मनुष्य जब शरीर की आवश्यकता के लिए नही वरन् जीभ की तृप्ति के लिए तरह-तरह के सूस्वादु भोजन करता है तो परिणाम रोग, शारीरिक कष्टों के रूप में ही प्राप्त होता है। यही बात जननेन्द्रिय के सम्बन्ध में हैं। उसका उपयोग सन्तानोत्पादन के लिए होता है। लेकिन जब मनुष्य सुखोभोग को प्रधान मानकर विषयों में प्रवृन्त होता तो प्रकृति की मर्यादा का उल्लंघन करते है उसका दण्ड उसे भयंकर रोगों,

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तज्जनित यंत्रणाओं और जीवनी शक्ति के ह्रास के रूप में भोगना पड़ता है। बहुत से लोग अपने जीवन की अवनत स्थिति का दोष भाग्य और दैव को देते हैं लेकिन वस्तु परक दृष्टि से देखा जाय तो भाग्य या दैव व्यक्ति के कहीं आड़े नहीं आते। शक्ति का अभाव ही हमें अपेक्षित उपलब्धियों से वंचित कर देता हैं। कहीं यात्रा पर चलते समय सभी व्यक्ति अपने साथ उचित मार्ग व्यय लेकर चलते है। यदि उसे ढंग से खर्च न किसा जाय तो साथ रखी गयी रकम बीच में खर्च हो सकती है और अपरिचित शहरों में हमारे लिए परेशानी खड़ी कर सकती है। अपने दैनिक जीवन में भी हम कोई लक्ष्य बनाकर निरन्तर यात्रा करते, रहते है, साथ में शक्ति भी होती हैं। यदि उसे व्यवस्थित क्रम से सुनियोजित रीति से प्रयुक्त न किया जाय तो बीच में ही रुक जाने की स्थिति आ जाती है।

सामान्यत; समझा जाता हैं कि शक्तियों का अपव्यव–मुख्यत; इन्द्रियों के द्वारा होताहै। परन्तु असंयम की जड़ें हमारे मनके भीतर रहती हैं, इन्द्रियां मन की प्रेरणा से काम भर करती हैं। देखा जा सकता कि किसी भी विषय को भोगने की लालसा सर्व प्रथम मन में ही होती है और उन विषयों का रस भी मन को ही आता है। मन की प्रेरणा पर बाह्य अवयव असमर्थ होते हुए भी काम करने को विवश हो जाते हें। आँखे दूखने आ गयी हो, पर यदि कोई बहुत ही मनोरंजक दृश्य या खेल सामने हो तो आँखे दर्द अनुभव करते हुए भी उस खेल या दृश्य को देखने के लिए विवश हो जाती हैं। जीभ में छाले पड़ रहे हों और चटपटी चीजें खाने से छालों का कष्ट और भी बढ़ जाने से जीभ की और भी अधिक कष्ट उठाना पड़ रहा हो फिर भी भीतर की स्वाद वासना से विवश होकर जीभ को चटपटे पदार्थ खाना पड़ते हैं।

यदि मन की स्थिति किसी भय, चिन्ता' शोक, क्रोध उद्वेग, के आवेश से ग्रस्त हो रही हो और उसी अन्त:प्रदेश में रहने वाली इन्दिय चेतना उससे प्रभावित हो रही हो तो बाह्य अवयव निरोग और समर्थ होते हुए भी सामने उपस्थित भोगों में रुचि लेना ही नहीं छोड़ देते वरन् उनसे घृणा भी करते हैं

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

किसी व्यक्ति को पुत्र की मृत्यु का शोक समाचार मिले उस समय उसका पेट खाली हो सामने स्वादिष्ट पदार्थों की सुसज्जित थाली रखी हो तो भी भूख भाग जायेगी। सामने थाली को छूने के लिए भी मन न करेगा एक ग्रास भी मुँह में न दिया जायेगा। यही बात अन्य इन्द्रियों के बारे में भी है, मनः क्षोभ की स्थिति में वे सभी अपने विषयों से विमुख हो जाती हैं।

इस प्रकार मन से प्रेरित होकर हम कई छिद्रों से अपनी शक्तियों का क्षरण करते रहते हैं। मानसिक शारीरिक, आर्थिक आदि विभिन्न स्रोतों से हमारी शक्तियां अनुचित और अवांछनीय ढंग से व्यय होती रहती है। मानसिक दृष्टि से हमारी विचारणायें, भावनायें और चिन्तनायें इतनी अस्तव्यस्त, दिशा हीन और व्यर्थ कार्यों में उलझी रहती है कि उनके सदुपयोग की बात ही नहीं सूझती। व्यर्थ चिन्तन में ही अधिकांश मानसिक शक्तियां नष्ट हो जाती है। फिर उनसे रचनात्मक उपलब्धि प्राप्त की जा सके ऐसी कोई मानसिक सामर्थ्य अपने पास नहीं बचती। इस सम्बन्ध में आवश्यकता इस बात की हैं कि अपनी मानसिक शक्तियों को व्यर्थ चिन्तन और गलत दिशाओं से रोक कर ऐसे कार्यों में उन्हें लगाया जाय जिससे कोई रचनात्मक उपलब्धि प्राप्त की जा सके।

शारीरिक वर्ग में इंन्द्रियों के संयम को रखा जा सकता है। यों तो इंद्रिया दस हैं। परन्तु मुख्यतः काम, स्वाद और स्पर्श इन्द्रिय के द्वारा ही शक्तियों का क्षरण हो जाता है। उच्छृंखल काम सेवन अनुपयुक्त आहार और शरीर को आराम से रखने की इच्छा प्रयत्न शारीरिक शक्तियों को सदुपयोग नहीं करने देते। स्मरण रखा जाना चाहिए कि इन्द्रियों का उपयोग करना असंयम नहीं है। शरीर आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उनका उपयोग आवश्यक है परन्तु असंयम तब होता है जब उनका उपयोग आवश्यकता की दृष्टि से नहीं उपयोग के लिए किया जाता है। उपभोग की प्रधानता ही असंयम है और उपयोग के लिए आवश्यकता की दृष्टि से आहार शरीर की बड़ी आवश्यकता है इसे सभी जानते हैं आहार न मिले तो जीवित रहना मुश्किल हो जाय। यह शरीर के लिये अत्यन्त आवश्यक धर्म है किन्तु शरीर-रक्षा के लिये स्वाद

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

की उपयोगिता समझ में नहीं आती। केवल स्वाद स्वाद की लालसा में पेट खराब हो जाता है, स्वास्थ्य गिर जाता है। इस तरह आहार जो शरीर की आवश्यकता थी, वही विधर्मी बन कर हमारी शक्तियों के पतन का कारण बन जाता है। कोई भी इन्द्रिय हो उसके उपभोग की एक सीमा निर्धारित है। उस सीमा के अन्दर बने रहने से ही उसका सच्चा उपयोग किया जा सकता है। पर यदि उसका अतिक्रमण किया गया तो रोग और शोक घेर लेंगे। इस प्रकार इंद्रियों का उपयोग आत्म विकास के लिए किया जा सकता है। इंन्द्रिया हमारी शत्रु नहीं है। शत्रु तो वे तब मालूम पड़ती हैं जब वे अपने बहिर्मुखी स्वभाव के रूप में काम करने लगतो है अर्थात् जब तक इनका उपयोग बाह्य जीवन के सुखोपभोग में किया जाता है तब तक तो ये शत्रु हैं किन्तु जैसे ही इन्हें इस आत्मा के विकास की ओर मोड देते है। इनके सहयोग का सत्परिणाम भी दिखाई देने लगेगा। इन्द्रियों का यदि सदुपयोग किया जाने लगे तो इन्ही से महत्वपूर्ण आध्यात्मिक लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं। आवश्यकता सिर्फ इतनी है कि इनकी स्वतंत्र विचरण की बहिर्मुखी प्रवृति पर अंकुश बनाये रहें। किसी घोड़े की लगाम छोड़ दें तो वह अपने सवार को गड्डे में गिरा कर ही छोड़ेगा। सवार की सुरक्षा इस बात पर निर्भर रहती है कि वह घोड़े के नियत्रंण को ढीला न करे। इससे जिस दिशा में जितनी दूर जाना अभीष्ट हों घोड़ा वही सुरक्षा पूर्वक पहुँचा दगा। इन्द्रियों पर भी नियंत्रण का अंकुश कसा हुआ रहे तो उनके द्वारा अपनी शक्तियों के सहारे कहीं भी पहुँचा जा सकता है।

मानसिक और शारीरिक शक्तियों के अपव्यय दुर्व्यय की तरह ही भौतिक सम्पदाओं का अपव्यय भी असंयम है। भौतिक सम्पदा में मुख्यत: धन सम्पत्ति की ही गणना की जाती है। यदि इन्हें व्यर्थ के कार्यों में खर्च किया जाता रहे तो अतुल सम्पदा भी एक समय में समाप्त हो जाती हैबड़ी-बड़ी जाय दादें आर्थिक असयम के कारण समाप्त हो जाती है। घर में एक भी व्यक्ति को यदि फिजूल खर्ची की आदत हुई तो सारा परिवार ही बर्बाद होने लगता है। अतीत काल में लखनऊ के करोड़ पति बाद में ताँगा हाकते देखे गये हैं।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आर्थिक शक्तियों की सुरक्षा और उपयुक्त कार्यों में खर्च करने की सूझ बूझ न होने के कारण अनुभव हीन लोग व्यापार में घाटा उठाते हैं और जीवन भर उस घाटे को पूरा नहीं कर पाते हैं। इनका जीवन मूलधन एवं ब्याज चुकाते रहने में ही बीत जाता है।

अपने खर्च बढ़ाने पर, पास में प्रचुर सम्पदा हो तो भी एक न एक दिन ऐसी स्थिति आ ही जाती है जिसमें पीछे पछताने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं होता। ऐसे अनेकों व्यक्ति हुए है जिन्होंने देखते देखते अपनी सारी सम्पत्ति फिजूल खर्ची में बर्बाद कर दी और सिर पर कर्ज लाद लिया। अव्यवस्थित ढंग से खर्च करने के कारण उन पर सूद दर सूद कर्ज बढ़ता गया और उससे छुटकारा पाना मुश्किल हो गया। अपनी आर्थिक शक्ति को अदूर दर्शिता और अविवेक पूर्ण ढंग से खर्च करते रहने पर एक स्थिति वह आ जाती है कि जीवनोपयोगी आवश्यकताओं को पूर्ति के लिए काम चलाऊ पैसा तक पास में नहीं बचता। तब यह विचार आता है कि उस समय फिजूल खर्ची में पैसा न उठाया जाता तो अच्छा रहता।

मानसिक क्षेत्र में हम अवांछनीय और निरर्थक चिन्तन धारा को उपयोगी और सार्थक दिशा में मोड़े शारीरिक दृष्टि से इंद्रियों को विषयोन्मुख न होने देकर अन्तर्मुख आत्मोन्मुख करें और भौतिक सम्पदा का सही उपयोग करना सीख लें तो यह जीवन ही धन्य हो सकता है। जीवनोत्कर्ष के लिए प्रयासरत हर साधक को चाहिए कि संयम की विभिन्न धाराओं की सही ढंग से समझे तथा जीवन में उनका समावेश करें।

मानसिक शक्तियों का अपव्यय न करें

अक्सर कहा जाता है कि प्रतिभायें परमात्मा की देन है। तभी तो हजारों में कोई एक साहित्यकार होता है, हजारों में कोई एक कलाकार होता है और हजारों में कोई वैज्ञानिक किसी विषय का विशेषज्ञ बन पाता है। बाह्य दृष्टि से ऐसा दिखाई भी देता हैं पर असलियत यह है कि विभूतिवान व्यक्तियों ने अपनी मानसिक शक्ति को उपयुक्त दिशा में लगाया तथा उसका लाभ उठाया। मानसिक शक्ति के सही सही उपयोग और विकास से ईश्वर किसी को रोकता नहीं। प्रयत्न किया जाय और उसके महत्व को समझा जाय तो उसे

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बढ़ाया भी जा सकता है। लेकिन उसके महत्व को भुला दिया जाता है, अनावश्यक अवांछनीय दिशाओं में उसका व्यय कर दिया जाता है और दोष ईश्वर पर मढ़ा जाता है कि उसने हमारे साथ पक्षपात किया। यह नहीं देखा जाता कि जिन लोगों ने प्रगति की उन्होंने अपनी शक्तियों का उपयोग किस प्रकार किया। वैज्ञानिक जब प्रयोग शाला में बैठ कर कोई अनुसंधान कर रहा होता है तो वह अपनी समस्त मानसिक प्रवृत्तियों को समेट कर उस अनुसंधान में लगा देता है। साहित्यकार जब किसी कृति का सृजन करता है तो उसके मस्तिष्क में दुनिया की कोई और बात नहीं रहती है, उसका सारा ध्यान उसकी संपूर्ण मानसिक शक्ति उस कृति को सुन्दर बनाने में लगी रहती है। महर्षि अरविंद ने जिस साहित्य का सृजन किया वह अध्यात्म का सर्वोच्च और उत्कृष्ट स्तर का साहित्य है। जब वे सृजन कार्य में लगे रहते थे तब उन्हें अपने आस पास का भी कोई ध्यान नहीं रहता था। अरविन्दाश्रम की श्रीमा ने एक स्थान पर लिखा है—एक बार भयंकर तूफान आया। अरविन्द के कमरे में खिड़किया जोरों से खुलती और बन्द होती थी। भड़भड़ की आवाज होती थी। पर अरविंद अपने कार्य में इस प्रकार लगे हुए थे जैसे कुछ हो हीन रहा हो।

संसार में जितने भी महापुरुष हुए है उन्होंने अपनी मानसिक शक्ति को सभी दिशाओं से रोक कर अपने कार्यों में लगाये रखा और उनका बिखराव न होने देकर महान् कार्य सम्पन्न किये। प्राय: हमारी मानसिक शक्तियां उन विभिन्न दिशाओं में यों ही बिखर जाती है उनका कोई उपयोग नहीं हो पाता। और वे जब व्यर्थ दिशाओं में अनुपयुक्त और अवांछनीय ढंग से खर्च होती है तो मनुष्य के पास उपयोगी कार्यों के लिए—उपयोगी दिशाओं में लगाने के लिए मानसिक शक्ति रह ही नहीं पाती। विकास और अवनति के जो भी स्तर मनुष्यों में दिखाई देते हैं उनका कारण मानसिक शक्तियों का उपयुक्त अथवा अनुपयुक्त दिशाओं में लगना ही है।

प्रगतिशील और उन्नत व्यक्तित्व के निर्माण में संयम अथवा एक दिशा में मानसिक शक्तियों के सदुपयोग का बड़ा महत्व है। एक विचारक के शब्दों

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

में–"मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण तभी होता है जब उसकी स्वाभाविक प्रवृत्तियां एक लक्ष्य को दृष्टि में रखकर व्यवस्थित की जाती हैं। एक आदर्श के नेतृत्व में जब हम अपनी मानसिक शक्तियों, अपनी इच्छाओं को नियमित करते हैं तभी व्यक्तियों का निर्माण होता है। यह नियमन या संयम किसी न किसी लक्ष्य की साधना में ही सम्भव है। न केवल यह कि लक्ष्य के बिना संयम का कुछ अर्थ हीं नही बल्कि यह भी सच है कि संयम की प्रेरणा भी लक्ष्य प्राप्ति की इच्छा के बिना नहीं मिलती। माँझी को यदि नदीं के किनारे पहुँचने की इच्छा न हो तो नौका को चलाने की प्रेरणा कौन देगा।

प्रत्येक व्यक्ति में मानसिक शक्ति के विकास की प्रचुर सम्भावनाये विद्यमान है लेकिन वे विकसित तब होती है जब उनका उपयोग करना सीखा जाय। उपयोग न किया गया तो घाटा है और गलत दिशा में उपयोग किया गया तो हानि है। अतः संयम साधक को अपनी मानसिक शक्तियों का प्रवाह गलत दिशा से रोकने के साथ साथ उसे सही दिशा में मोड़ने की साधना में संयम की सफलता समझनी चाहिए अन्यथा सयम एकांगी रह जायगा और उससे कोई विशेष लाभ नहीं उठाया जा सकेगा।

प्रायः हमारी मानसिक शक्तियां मोह तृष्णा और अहंता उद्विग्नता की दिशा में नष्ट होती रहती हैं। अपने परिवार के लोगों से स्नेह किया जाय, उनके प्रति कर्तव्य पालन किया जाय यह तो ठीक है किन्तु उन्हीं के लिए मरते खपते रहा जाय इसका कोई औचित्य नहीं है। मोहग्रस्त व्यक्ति इससे भी एक कदम आगे निकल जाता है और अपने परिवार वालों के लिए न केवल दिन रात खपता रहता है वरन् मस्तिष्क में भी उन्हें अधिकाधिक सुविधायें प्रदान करने से लेकर अपने पास बनाये रहने तक की उधेड़बुन में लगा रहता है। व्यक्तियों के प्रति यह भावना मोह है तो वस्तुओं के प्रति उत्पन्न होंने वाली इसी भावना का नाम तृष्णा है। अनावश्यक रूप से वस्तुओं को इकट्ठा करने की योजनायें बनाना और उनका ताना बाना बुनना तृष्णा जनित विकृति ही है। गहराई से देखा जाय तो अनावश्यक रूप से वस्तुओं को संग्रहीत करने की कोई उपयोगिता नहीं है। इसी प्रकार अपने अहंकार को बढ़ाने

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

लोगों पर अपने बड़प्पन का सिक्का जमाने से लेकर क्रोधित होने, आवेशग्रस्त रहने का कारण अहंता–अपने सम्बन्ध में अहंकार पूर्ण मान्यता ही है। मैं बड़ा हूँ या में किस प्रकार लोगों पर अपना प्रभाव जमा सकता हूँ ? इन्ही दिशाओं में व्यक्ति का चिन्तन लगा रहता है फलस्वरूप व्यक्ति अपनी शक्तियों का अपक्षय करता रहता है और उनसे कोई लाभ नहीं उठा पाता।

कोई भी प्रेरणा पहले विचार के रूप में ही उठती है और मस्तिष्क उसके अनुसार योजना बनाने में निरत हो जाता है। इस प्रकार विचार शक्ति व्यक्तित्व के मानसिक पक्ष में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। विचार ही मनुष्य की प्रेरणा शक्ति हैं और उसी के द्वारा हमारे मनः क्षेत्र में किसी बाह्य वस्तु का प्रभाव होता है। हम अपनी आँखों से जो कुछ देखते है। उसकी छवि हमारे मानस पटल पर पड़ती है लेकिन वह छवि जो कुछ हम देखते हैं उससे भिन्न होती है। कारण कि उसमें मनुष्य अपनी कल्पनाओं का रग भी भर देता है। यही कारण है कि एक व्यक्ति किसी वस्तु से प्रेम करने लगता है तो दूसरा उसी को घृणा की दृष्टि से देखता है। एक को उसमें गुण ही गुण नजर आते है तो दूसरे को उसमें दोष ही दोष दिखाई देते है।

विचार और दिशा–

किसी भी वस्तु का प्रभाव या कोई विचार हमारे मस्तिष्क में देर तक बना रहता है। यदि वह प्रभाव घनीभूत हुआ तो उसे प्राप्त करने या साक्षात् करने की भी आकाँक्षा उठती है। उस आकाँक्षा की पूर्ति के लिए मनुष्य प्रबल प्रयत्न भी करने लगता है। अर्थात् विचार मनुष्य को कोई कार्य करने किसी दिशा में प्रवृत्त करने का भी कारण है। गीताकार ने इसी को स्पष्ट करते हुए कहा है

ध्यायतो विषयान्पुसः संगन्तेषूपजायते।
संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते।
क्रोधाद्भवति संमेह समोहात्स्मृति विभ्रमः
स्मृतिभ्रशांद्बुद्धि नाशने बुद्धि नाशात्प्रणश्यति ॥

अर्थात्– विषयों का चिन्तन करने से उनसे आशक्ति उत्पन्न

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

होती है आसक्ति से कामना और कामना में विघ्न पड़ने पर क्रोध उत्पन्न होता है। क्रोध से मूढ़ता और मूढ़ता के कारण मनुष्य पथ भ्रष्ट हो जाता है जिससे उसका विनाश होता है।

प्रायः हमारी शक्तियां इसी प्रकार नष्ट, होती हैं। जिन विषयों का चिन्तन हमें नहीं करना चाहिए, या जो विचार प्रत्यक्ष पतन की दिशा में ढकेलने वाले लगते हैं उन्हें सोचने समझने और मन के लड्डू खाते रहने में ही अधिकांश लोग अपना चिन्तन और समय नष्ट करते है। उदाहरण के लिए मेहनत मजदूरी करके अपना पेट भरने वाले लोग सम्पन्न होने और रईसी ढंग से खर्च करने की बात सोचा करते हैं। जानते हैं कि यह हमारे बस की बात नहीं है फिर भी उस तरह की कल्पनायें करने में ही रस लिया करते है। शेख चिल्ली की वह कहानी सर्व विख्यात है जो अपने सिर पर दूध की मटकी लिये जा रहा था, उसे बेचकर बकरी खरीदने, बकरी से गाय, गाय से अनेक गायें फिर परिवार बसाने और बच्चे होने तक की न जाने क्या बातें वह सोच गया। और उसी सोच विचार में रहने के कारण लापरवाही से मटकी फूट गयी तो अपना घर उजड़ जाने का रोना रोते हुए सिर पीटने लगा।

प्रायः ज्यादातर लोग इसी तरह के सपने देखा करते हैं और अपनी मानसिक शक्ति का जो श्रेष्टतम उपयोग इस समय के लिए किया जा सकता था उसे भविष्य का ताना बाना बुनने या बीते हुए कल का पश्चाताप करने में नष्ट कर देते हैं। जिस तरह लोग भविष्य के ख्याली पुलाव पकाने या कल की चिन्ता करने में अपनी शक्ति बर्बाद कर देते हैं उसी प्रकार जो गुजर गया है, जो बीत चुका है और जो हमारी पकड़ से छूट चुका है उसके लिए चिन्ताये करते हुए सुन्दर वर्तमान का कोई उपयोग नहीं कर पाते। यह एक प्रकार का अपव्यय ही है। यदि हम मानसिक शक्तियों को सपने देखने, कल का पछतावा करने या बीते हुए के लिए चिन्तित बने रहने से रोक सके तो उनका उपयोग वर्तमान को सुन्दर बनाने और उज्ज्वल भविष्य की आधार शिला रखने में कर सकते है।

इस प्रकार के अपव्यय से हानि यह है कि हम अपनीं मानसिक शक्तियों

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

का लाभ उठाने से वंचित रह जाते हैं । अपनी शक्तियों का अवांछनीय दिशाओं में व्यय करना प्रत्यक्ष ही हानि उपस्थित करता है । गीता में कहा भी गया है कि अवाँछनीय चिन्तन से उन विषयों में आसक्ति जागती है और आसक्ति से कामना उत्पन्न होती है । शराबियों के बीच रहते हुए अपने विचार भी शराबियों से ही बनने लगते हैं । कुसंगति में पड़ कर कोई व्यक्ति तत्काल ही अपने साथियों का अनुकरण नहीं करता । पहले देर तक उन पर विचार करता है । लम्बी अवधि तक वैसे ही विचार करते रहने के कारण उसकी इच्छा शराब पीने की होती है और वह मद्यपान में प्रवृत्त होता है । जीवन व्यवस्था में अकस्मात् ही कोई परिवर्तन नहीं हो जाता । जब भी मनुष्य कोई कार्य करता है तो क्षणिक आवेश में नहीं—देर तक उस भावना को अपने हृदय में जमाये रहने के बाद ही करता है । उदाहरण के लिए कोई व्यक्ति किसी की हत्या कर देता है तो यह कहना अनुचित होगा कि उसने क्षणिक आवेश में ऐसा कर दिया । वस्तुतः तो वह हत्या की भावना अपने मन में देर से पाले हुए था । वह परिस्थिति तो उन विचारों को कार्यक्रम में अभिव्यक्त होने देने का असमर मात्र थी जिसे हम क्षणिक आवेश कहते हैं ।

मनुष्य विचार करने में स्वतंत्र है । भले ही वैसी क्रिया की उसे स्वतंत्रता न हो । इसीलिए विचार जब आकांक्षा का रूप धारण कर लेते हैं तो व्यक्ति उस आकांक्षा को पूरा करने के अवसर की ताक में रहता है । अपराध कर्म या अवाँछनीय कार्यों के जनक अपराधी और अवांछनीय विचार ही हैं । बाहरी परिस्थितियाँ तो विचारों के अनुरूप ही प्रभाव डालती हैं । अर्जुन से एक बार इन्द्र दरबार की अप्सरा उर्वशी ने प्रणय निवेदन किया । यदि अर्जुन विचारों से व्यभिचारी होते तो वही परिस्थिति उनके लिए पतन का कारण बन जाती । लेकिन अर्जुन ने विचारों का संयम परिस्थितियों से अप्रभावित रहना सीखा था, सो वही परिस्थिति उनके चरित्र को निखारने वाली बन गयी । अतः किसी दुष्कर्म का कलंक छुटाने के लिए यह नहीं कहा जा सकता कि वह आकस्मिक या परिस्थिति वश हुआ । वस्तुतः उसकी जड़ हमारे विचारों में—हमारे चिन्तन में अनौचित्य के रूप में पहले ही जम चुकी थी ?

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org / www.vicharkrantibooks.org

चिन्तन की दिशा बहकने पर–

अनावश्यक और अवांछनीय चिन्तन में अपनी मानसिक शक्ति का अपव्यय करते रहने से ही उन्हें रचनात्मक दिशा में लगाने योग्य स्थिति नहीं बन पाती। बाह्य परिस्थितियों में परिवर्तन के लिए मानसिक संयम सर्व प्रथम आवश्यक है अपनी मानसिक शक्तियों की धारा अनावश्यक और अवांछनीय दिशा से मोड़कर रचनात्मक दिशा में प्रवाहित करते ही मनुष्य का काया कल्प आरम्भ हो जाता है चिन्तन की भ्रान्त दिशा के कारण जो विकृतियाँ आती है वे तृष्णा, अहंता और उद्विग्नता के रूप में मनुष्य को विनाश के गर्त में धकेल देती हैं। गीता में जिन्हें आसक्ति, कामना, क्रोध अविवेक पथ भ्रष्टता और विनाश कहा गया है वे सब इन तीनों वर्गों में आ जाती है।

अनावश्यक और अवांछनीय चिन्तन का परिणाम तृष्णा के रूप में सामने आता है। मनुष्य की तृष्णाओं इच्छाओं और आकांक्षाओं का कोई अन्त ही नहीं है और वह ऐसी इच्छायें किया करता है कि जिन्हें पूरा करना तो क्या किसी से कहना भी अच्छा नहीं लगता। यदि हम अपने दिन भर के विचारों या इच्छाओं को कागज पर नोट करते चलें, जब भी कोई इच्छा उठे सुबह से शाम के बीच उसे लिख लिया करे और शाम को यह देखा जाय कि उन इच्छाओं में से कितनी पूरी की जानी चाहिए या पूरी की जा सकती है तथा कितनी पूरी नहीं की जा सकती तो इच्छाओं का आसानी से विश्लेषण किया जा सकता है। और यह आत्म निरीक्षण भी हो सकता है कि हम अपनी मानसिक शक्तियों का कितना अंश अनुपयुक्त रीति से और कितना उपयुक्त रति से खर्च करते है। विचार प्रक्रिया का इस प्रकार सजगता पूर्वक निरीक्षण हमारे मन मस्तिष्क में चलने वाली अवाँछनीयता, निरर्थकता और सार्थकता को दूध और पानी की तरह अलग करते हैं।

अवांछनीय और निरुपयोगी विचार ही मनुष्य को दिक्भ्रान्त और पथ भ्रष्ट करते है। उन्हीं से तृष्णा. वासना, अहंता और उद्विग्नता आदि विकार उत्पन्न होते हैं। सिनेमा देखने और उपन्यास पढ़ने का प्रभाव अवांछनीय दिशा में बहक गया तो वैसी स्थिति प्राप्त करने का जी होने लगता है यही बात अनुपयोगगी चिन्तन के कारण होती है और व्यक्ति अपनी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

इच्छित वस्तु को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहता है। उसमें रुकावटें अहं को उत्तेजित करती है, ईर्ष्या द्वेष और वैर विरोध उत्पन्न होता है अथवा उद्विग्नता उत्तेजना जैसे विकार उत्पन्न होते हैं। इन विकारों की जड़ है तो अवांछनीय और अनावश्क चिन्तन ही पर ये विकार मानसिक शक्तियों के दहन में घी का काम करती है। घी जलता है और जलती हुई चीजों में उसे डाल दिया जाय तो आग और भड़क उठती है। अवांछनीय चिन्तन और अनावश्यक विचार तो मानसिक शक्ति को बर्बाद करते ही हैं उनमें तृष्णा वासना, अहंता और उद्विग्नता के विकार भी शामिल हो जाते हैं तो वह विनाश और भी भभक उठता है।

किसी वस्तु को प्राप्त करने की इच्छा का नाम तृष्णा है। तृष्णा प्रायः अपनी स्थिति से अधिक ऊँची सामर्थ्य वाली वस्तुओं के लिए ही हुआ करती है। उदाहरण के लिए एक गरीब आदमी कारमोटर या बंगले की इच्छा करे, अनपढ़ और गंवार व्यक्ति विद्वता अर्जित करने अथवा कोई शोधग्रन्थ लिखने की इच्छा करता रहे। यह आकांक्षा रखना और उसे पूरी करने के लिए प्रयत्न करना अलग बात हैं। तृष्णा उस प्रयत्न परिश्रम का नाम नहीं हैं। उसमें तो आरम्भ से ही अपने को लक्ष्य पर पहुँचा मान लिया जाता है लोग कल्पना में ही उसका आनन्द लेते रहते हैं। अनाश्यक और अनुपयुक्त रूप से व्यक्ति तृष्णा में ही उलझा रहता है। उस लक्ष्य को कैसे प्राप्त किया जाय इस दिशा में विचार करने की अपेक्षा इस दिशा में होते तो कितना अच्छा रहता—इसी की कल्पनायें उठती रहती है। वस्तुओं के प्रति मोह, जो अपने पास नहीं है उसे प्राप्त करने की ललक, प्राप्त को सुरक्षित रखने की सकल्प, आदि अनेकों बातें तृष्णा के परिवार में ही आ जाती है।

तृष्णा वासना का शमन--

वस्तुओं के प्रति आकर्षण का—अतृप्त इच्छाओं का नाम तृष्णा है तो व्यक्तियों के प्रति आकर्षण और मानसिक बन्धन का नाम मोह है। तृष्णा के कारण व्यक्ति जिस प्रकार अपनी इच्छित वस्तुओं से अपने मनको बाँध लेताहै, उसी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

प्रकार मोह के कारण मन को अपने स्वजन संबधियों से बाँध लेता है। यह मोह ही हैं जिससे प्रेरित होकर लोग जीवन के आवश्यक पहलुओं की उपेक्षा करके अपने स्वजन-कुटुम्बियों के लिए साधन सुविधायें जुटाता है। मोह का एक रूप अपने कुटुम्बियों को साथ रखने की प्रबल आकाँक्षा भी है। यदि घर में से कोई किसी आवश्यक कार्य से कहीं गया है तो विचार वहीं दौड़ते रहतेहैं, मन किसी कार्य में नहीं लगता। आदि आदि बातें मोह के कारण ही होती हैं।

परिजनों के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन किया जाय किन्तु उसके प्रति इतना मोहाभिभूतनी नहीं हुआ जाय कि उस कारण अपनी और परिजनों की प्रगति ही अवरूद्ध होने लगे। मोह के कारण जब परिजनों से अलग होने में पीड़ा होती हो भले ही वह आवश्यक हो किन्तु मोह के कारण वैसा नहीं हो पाता। जैसे कोई पिता अपने लडके को पढ़ने के लिए केवल इस कारण शहर न भेजे कि वह उसका विछोह सहन नहीं कर सकता तो उस दशा में मोह अपनी तथा लड़के की प्रगति में बड़ा गति रोध उत्पन्न कर देता है मोह के कारण उत्पन्न होने वाली दुःस्थिति का निराकरण अपनत्व बढ़ाने परिजनों के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करते रहने से ही हो सकता है। मन को किसी भी वस्तु या व्यक्ति के प्रति अनावश्यक रूप से आकर्षित न होने दिया तथा अपनी मानसिक शक्तियों को एक दिशा में—अभीष्ट लक्ष्य की ओर अग्रसर रखा ज य तो विभिन्न बस्तुओं को देखकर उत्पन्न होने वाली आकाँक्षा और उसमें लगने वाला चिन्तन श्रम रचनात्मक कार्यों में लग सकता है।

व्यर्थ के चिन्तन और अनावश्यक रूप से सोच विचार करते रहने के कारण ही इस प्रकार की स्थिति बनती हैं मोह, तृष्णा, वासना आदि के विकार उत्पन्न होते हैं। और मस्तिष्क को यदि सार्थक चिंतन में व्यस्त रखा जाय तो इस प्रकार की विसंगतिया उत्पन्न ही नहीं होगी। इसीलिए कहा गया है कि-'खाली दिमाग शैतान का घर होता है।' इस कहावत का अर्थ हैं अव्यस्त और शिथिल मास्तिष्क में तरह तरह की कल्पनायें कुक-ल्पनायें उठा करती हैं और हमारी मानसिक शक्ति फुल-झड़ी की तरह जलती

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

रहती है। उदाहरण के लिए वासना को ही लें। जिसके कारण जननेन्द्रिय के माध्यम से मानसिक तथा शारीरिक शक्ति का क्षरण होता है। यह विकार विशुद्ध रूप से खाली दिमाग की ही उपज है। कहा जा सकता है कि यह विकृति वातावरण और गलत व्यक्तियों के संसर्ग से उत्पन्न होती है। यह कहना एक सीमा तक ही सही हो सकता है। बातावरण से व्यक्ति तभी प्रभावित होता हैं जबकि उसमें उसी तरह के सजातीय संस्कार हों। अन्यथा लंका में विभीषण की तरह गलत व्यक्तियों के बीच भी अपने को सही रखा जा सकता है। बैठे ठाले यदि व्यर्थ चिन्तन करते रहा जाय, गप्पबाजियाँ और उस तरह का साहित्य पढ़ने या मनोररंजन करने में ही प्रबृत्त रहा जाय तो अच्छे वातावरण में रहते हुए भी वासना के कारण लोग पथ भ्रष्ट हो जाते हैं। इसलिए स्वय को व्यर्थके चिंतन और अनावश्यक विचारों से बचातेहुए मानसिक शक्तियों को संयमित निगृहीत करना चाहिए।

अहंता उद्विग्नता का नियंत्रण–

तृष्णा वासना की तरह ही अहंता भी मानासिक असंयय का दुष्परिणाम हैं। अहङ्कार के कारण भी अपनी मानसिक शक्तियाँ बर्बाद होती रहती है। अपने बारे में औरों की राय जानने की इच्छा चर्चित होने की आकाँक्षा, दूसरों से प्रशंसा सुनने और करवाने की अपेक्षा आदि कितने ही रूपों में अहंता व्यक्ति के मनमस्तिष्क मे उठती उमगती रहती है। इस तरह इच्छा और अपेक्षा के मूल में अहंता ही मूल कारण है। दूसरों से प्रशंसा सुनने या उनकी राय जानने का एक ही उद्देश्य है अपने को महत्वपूर्ण अनुभव करना। अपने को महत्व पूर्ण अनुभव करने या व्यक्त करने के लिए मनुष्य का मस्तिष्क ऐसी उधेड़बुन में उलझ जाता है कि फिर वह अपनी सारी विचारशक्ति को उसी ताने बाने में उलझा देता हैं। महत्वाकांक्षा कोई बुरी बात नहीं है पर जब वह अहंकार का पोषण करने के लिए ही की जाती हो तो मस्तिष्क फिर उसी दिशा में सोचने के लिए व्यस्त हो जाता है। उस दशा में रचनात्मक चिंतन की दिशा ही नहीं सूझती।

सारी विचारशीलता अहंकार के पोषण में न भी लगे तो भी व्यक्ति

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अहंता के कारण अपने सम्बन्ध में ऐसी मान्यतायें स्थापित कर लेता है कि उन पर थोड़ी भी प्रतिकूलता सहन नहीं होती। क्रोध, उत्तेजना और आवेश जैसे मनोविकार अहंता के कारण ही उत्पन्न होते हैं। अहंता व्यक्ति को अपने आप में सम्मान्य और प्रतिष्ठित कर देती है और अन्य लोगों से भी उसी स्तर का व्यवहार करने की अपेक्षा करती है। उदाहण के लिए कोई व्यक्ति यह नहीं चाहता कि उसकी बात को न माना जाय या उसकी उपेक्षा की जाय। यों सत्परामर्श सभी मानते पर अपने परामर्श में कोई त्रुटि हो भी तो अहम्मन्यता उसमें कोई दोष नहीं देखती और दूसरे व्यक्ति से उसे अक्षरशः स्वीकार कर लेने का आग्रह करती है। परिस्थिति वश या परामर्श के अव्यावहारिक होने पर जब उसे स्वीकार नहीं किया जाता है तो परामर्शदाता उसे अपनी मान प्रतिष्ठा का विषय बना लेता है और क्षुब्ध हो उठता है।

देखा जाय तो इस तरह की समस्त फल श्रुतियाँ-अहंता के कारण होने वाली मस्तिष्कीय प्रतिक्रियायें व्यर्थ ही नहीं हानिकारक भी है। किसी प्रसंग में जिसे हम गम्भीर समझ रहे हैं और दूसरा उसे सहज मान कर पूरा ध्यान नहीं दे रहा है तो रुष्ट होने से लेकर क्रोध व्यक्त करने तक न जाने कितनी प्रतिक्रियायें करने लगते हैं। विचार किया जाना चाहिए कि यह स्थिति क्यों बन रही है। कहीं हम ही तो गल्ती पर नहीं हैं या सामने वाला उस परामर्श में क्या व्यावहारिक कठिनाई अनुभव कर रहा है। यह विचार किया जाय तो कोई अर्थवत्ता पूर्ण भी है। पर आमतौर पर लोग अपने को सही और शेष को गलत, अपने को महान और शेष को क्षुद्र अपने को बड़ा और बाकी सबको छोटा मानते हैं। अहंता इसी का नाम है और जब इन मान्यताओं पर हल्का सा आघात भी होता है तो क्रुद्ध हो उठने की स्थिति आती है।

क्रोध की जननी भी अहंता ही है। किसी ने कोई अपशब्द कह दिये तो जिससे कुछ कहा गया है उसका कुछ बिगड़ता नहीं। बस अपने बड़प्पन को ठेस लगती प्रतीत होती है और यह बात बड़ी गहरी चुभती है कि जैसे उसने अपने प्रति कोई अपराधकर दिया हो। यदि क्षमा की नीति अपनायी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जाती तो प्रति पक्षी ने जो कुछ कह दिया है उसे भुला देने या ध्यान न देने की नीति अपनायी जाती तो मस्तिष्क में होने वाली उथल पुथल, अहं को चोट पहुँचाने पर होने वाले तिलमिलाहट-हृदय में शुल सी चुभने वाली वेदना जैसी दाहक अनुभूतियोंसे बचा जा सकता था और अपनी मानसिक शक्तियोंको उस अग्नि में जलने देने से बचाया जा सकता था। परन्तु अहम्मन्यता इन सब बातों को कहाँ सोचती है, उसमें तो आघात का प्रत्याघात, मुंह तोड़ उत्तर देने और रोष व्यक्त करने से लेकर सामने वाले को नष्ट कर देने तक के विचार उठते हैं। संसार में जितने भी उपद्रव होते हैं, व्यक्ति गत लड़ाई झगड़े होते हैं मन मुटाव के कारण होने वाले अपराधों की जड़ में अहंता ही है और उसके कारण मानवीय शक्ति का व्यक्ति की मानसिक शक्ति का बहुत बड़ा भाग नष्ट हो जाता है।

अहंता जन्य होने वाली प्रति क्रिया और फल स्वरूप अपनी शक्ति के होने वाले अपव्यय ही नही दुर्व्यय को रोकने के लिए सुलझी हुई मान्यतायें अपने चिन्तन में बिठाई जाँय तथा उसके कारण होने वाली हानियों को अपनी क्षति समझ कर उनसे बचने के लिए उसी स्तर के प्रयास किये जाँय जैसे कि लोग व्यापार व्यवसाय में सम्भावित घाटे से बचने के लिए करते है। समझा जाना चाहिए कि अपनी ही भांति औरों को भी अपने अस्तित्व का भान है और उन्हें भी उसकी रक्षा का अधिकार है। सामने वाला यदि आवेशवश होकर कोई गलत बात कह भी रहा है तो उसकी उपेक्षा करने अथवा उसके विधेयात्मक पहलू पर ध्यान देने में जितना हित है उतना उलट कर प्रतिकार करने में नहीं है। उसके प्रतिकार का ढंग समाधान परक होना चाहिए न कि प्रतिशोध से भरा हुआ। जैसे उस व्यक्ति के नाराज होने या खिन्न होने के कारण का पता लगाया जा सकता है। उस के शान्त चित होने पर उसकी भ्रान्तियों का निराकरण किया जा सकता है। इस प्रकार समाधान परक नीति अपना लेने से अपने व्यक्तित्व की सुन्दरता में चार चांद लग जाते हैं जबकि उलटकर प्रत्याघात करने में अपना स्तर भी उतना ही गिर जाता है जितना कि सामने वाले का। किसी गाली का जवाब गाली से देने में व्यक्ति

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

को नैतिकता के उसी धरातल पर उतरना पड़ेगा जिस धरातल पर गाली देने वाला खड़ा है। नीचे उतरने में, अपनी उच्च नैतिकता को अधोगामी बना लेने में कौनसा बड़प्पन है।

अहंता को पहुँचने वाली ठेस जहां चित्त में विषाद उत्पन्न करती है वही अविवेक तथा उद्विग्नता भी उत्पन्न होती है। गीता में कहा भी गया है कि अविवेक, मूढ़ता और बुद्धि नाश के कारण व्यक्ति का पतन हो जाता है। इन विकारों का एक बड़ा कारण उद्विग्नता भी है। जल्दबाजी आवेश, उत्तेजना घबराहट, चिन्ता, अनिश्चय जैसी कितनी ही बाते उद्विग्नता के कारण उत्पन्न होती है। जो किसी लक्ष्य को प्राप्त करने, कोई कार्य करने किसी परिणाम को प्राप्त करने की आतुरता मात्र है।

किसी कार्य का महत्व या किसी सिद्धान्त की उपयोगिता अच्छी तरह समझ में आ जाती है तो उसे तुरत फुरत कर डालने का जी होता है। अनुचित लगने वाली बात का प्रतिकार करने में भी ऐसी ही मनोवृत्ति बन जाती है। जबकि कोई भी कार्य नियत ढंग से व्यवस्थित रूप में ही सपन्न किया जा सकता है और उसके अपेक्षित परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं। उदहारण के लिए साधना उपासना का महत्व समझ लेने और उस पर निष्ठा जम जाने के बाद यह उत्कृष्ट लगन पैदा होने लगती है कि ईश्वर अभी मिल जाय हमारा स्तर अभी महामानवों जैसा हो जाय, लोग हमें अभी महात्मा के रूप में देखने लगे। महामानव बनने या स्तर ऊँचा उठाने का आदर्श सराहनीय है पर यह तथ्य यदि भुला दिया गया कि वह स्थिति श्रम, समय और लगन साध्य है तो मार्ग से भटक जाने का खतरा बना ही रहेगा। क्योंकि तब क्रम व्यवस्था और साधना की सीड़ियों पर ध्यान ही नहीं जायगा।

अग्निकाण्ड में घिरे कई लोग व्यग्रता के कारण जल मरते हैं। क्योंकि उस समय किसी प्रकार अपने को बचा लेने की ही भावना रहती है और वह भावना इतनी तीव्र होती है कि उसमें मानसिक सन्तुलन बिगड़ जाता है फल स्वरूप बचना सम्भव होने पर भी वे लोग बच नहीं पाते। मानसिक शक्तियों को इस प्रकार जड़ बना देने वाली उद्विग्नता समय समय पर हर

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

सामान्य व्यक्ति में उत्पन्न होती है। कई लोगों के स्वभाव में तो यह इस प्रकार आ जाती है कि वे हर काम जल्दबाजी, उतावलेपन और आतुरता से करने के कारण किसी काम को भली भांति नही करते और अपनी शक्तियों को नष्ट कर डालते हैं। उनसे कोई लाभ नहीं उठा पाते।

उद्विग्नता के इस दोष से बचा जा सके और प्रत्येक कार्य व्यवस्थित ढंग से सम्पन्न होते है–यह मान्यता विकसित की जा सके तो उपलब्ध स्थिति में ही उतावली जल्दबाजी में किये गये कार्यो की अपेक्षा उनसे अच्छी तरह उन्ही कार्यो को किया जा सकता है और जो काम उद्विग्नता के कारण बिगड़ जाते हैं उन्हें धैर्य, व्यवस्था तथा क्रम व्यवस्था के द्वारा सुधारा जा सकता है।

मानसिक शक्ति एवं उसके उपयोग का महत्व अधिकांश बुद्धि जीवी भली प्रकार जानते हैं, किन्तु उनका समुचित लाभ विरले ही उठा पाते हैं। यदि मानसिक संयम का व्यवस्थित अभ्यास अल्प मात्रा में भी किया जाय तो जीवन की अनेक विडम्बनाओं से बचना तथा अनेक सफलताओं का अधिकारी बनना हर किसी के लिए संभव हो सकता है।

मौन मन और वाणी का संयम

मनुष्य जो भी कुछ सोचता और विचार करता है उसे वाणी के माध्यम से व्यक्त करता है। लिखकर व्यक्त करने की कला तो बाद में बिकसिज हुई मनुष्य ने अपने विचारों और भावों को सर्वप्रथम वाणी के माध्यम से व्यक्त करना सीखा वाणी और मस्तिष्क का सीधा सम्बन्ध है, विशेषतः अभिव्यक्ति के लिए तो सबके लिये वही सर्वाधिक सुलभ है। इसलिए मानसिक शक्तियों का बहिर्मुखी मुख्यतः वाणी के द्वारा ही होता है। अहंता, मोह–तृष्णा- वासना आदि के द्वारा तो मानसिक शक्तियां अन्दर-अन्दर ही जलती रहती है। वाणी के माध्यम से उनकी ज्वालायें बाहर भी धधकने लगती है। इसलिए वाणी के संयम को मानसिक संयमत के साथ भी जोड़े रखा गया है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

विचारों पर संयम कर लिया जाय और वाणी को असंयमित ही रहने दिया जाय तो विचार संयम का आधार भी लड़खड़ा उठता है हमेशा कुछ न कुछ कहते रहने की आदत व्यक्ति को कोई विषय ढूंढ़ने के लिए भी बाध्य करती है। इसलिये विचार संयम के साथ-साथ वाणी का संयम भी अनिवार्य है। वरन वाणी का संयम—मानसिक संयम का ही अङ्ग है। किसी बर्तन का छिद्र बन्द कर देने के बाद उसमें रखी जाने वाली वस्तु को सुरक्षित रखने के लिये बर्तन का मुँह बन्द रखना भी आवश्यक है। अन्यथा बरतन में रखी हुई वस्तु कभी भी किसी भी समय फैल सकती है।

विचार आकांक्षा और भावना पक्ष से मानसिक शक्तियों का क्षरण रोका गया लेकिन आचार पक्ष से—अभिव्यक्ति पक्ष से वाक् संयम न किया गया तो वह एकांगी ही रह जायगा। इसलिए मानसिक संयम के साथ-साथ वाणी का संयम भी अनिवार्य रूप से आवश्यक है।

मानसिक संयम के साथ वाणी के समय की महत्ता को भी समझना चाहिए और उसे हल्के रूप में नहीं लेना चाहिये। बहुत से व्यक्ति वाणी के संयम को इतना अधिक महत्व नहीं देते उनकी मान्यता होती है कि बोलने में क्या लगता है ? बोलने में बड़ी शक्ति खर्च होती है। एक घण्टे लगातार बोलने पर व्यक्ति इतना अधिक थक जाता है कि आठ घण्टे तक शारीरिक श्रम किया जाता तो उतनी थकान नहीं आती। कारण वाणी का सीधा सम्बन्ध मस्तिष्क से है। और काम तो हाथ पैर से भी किये जा सकते हैं, और उन्हें करते समय ध्यान कहीं और भी रह सकता है पर बोलते समय सारा ध्यान बोलने पर ही रखना पड़ता है।

बेहोश होने अथवा मरने से पूर्व अन्य अङ्ग बाद में निष्क्रिय होते हैं पहले वाणी ही अवरुद्ध होती है। क्योंकि मस्तिष्क जैसे-जैसे शिथिल या अचेत होता जाता है वाक् इन्द्रिय वैसे-वैसे असमर्थ होती जाती है। उस समय न शरीर में इतनी शक्ति रह जाती है और न मन मस्तिष्क में ही अपनी चेतना रहती है कि कुछ शब्द भी कहे जा सकें। शरीर में जो शक्ति और मस्तिष्क में जो चेतना बची रहती है वह इतनी अपर्याप्त रहती है कि

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उससे कुछ शब्द भी नहीं बोले जा सकते। यद्यपि वह शक्ति अन्य अंगों को हिलाने डुलाने के लिये पर्याप्त रहती है। मरते हुए व्यक्ति कोई बात सुनकर उसका उत्तर सिर हिलाकर ही दे पाते हैं–कुछ कह पाना अधिकांश लोगों के लिए कठिन ही होता है। कहावत है भी कि—'टके की जबान नहीं हिलती पसेरी का सिर हल जाता है।

शारीरिक क्रियाकलापों में जिन कार्यों में सर्वाधिक मानसिक शक्ति खर्च होती है वह वाणी ही है। इसीलिये मौन की गणना मानसिक तप में की गयी है। भगवद्गीता में–भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है–

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्म विनिग्रहः।
भाव सशुद्धिरित्येत्तपो मानसमुच्यते ॥

अर्थात्—मन की प्रसन्नता, सौम्यशालीनता, मौन मनोनिग्रह और विचारों की शुद्धि मानसिक तप कहे जाते हैं।

मानसिक संयम साधने में मौन का अद्भुत महत्व सिद्ध होता है। शास्त्रों में इस तरह के ढेरों उदाहरण भरे पड़े हैं। महर्षि वेद व्यास ने महाभारत जैसे ग्रन्थ को लिखने का विचार किया तो उन्हें एक लेखक की आवश्यकता अनुभव हुई। क्योंकि ग्रन्थ को जितना विशाल और गम्भीर बनाने की योजना थी उस दृष्टि से प्रसगों पर विचार करने और उन्हें लिखते रहने की प्रक्रिया एक साथ चलाना सम्भव नहीं था। उसमे काफी समय भी लगता और ग्रन्थ को वैसा स्तर भी नहीं दिया जा सकता। निदान यह सोचा गया कि वेद व्यास बोलते जाय और कोई लिखता जाये। उन्होने इस कार्य के लिये गणेशजी को चुना। गणेशजी ने लेखन कार्य सम्हाला और वेदव्यास बोलते जाते तथा गणेशजी लिखते जाते। जब तक महाभारत लिखा जाता रहा तब तक गणेशजी एक शब्द भी न बोले ? वेद व्यासजी गणेश ने जी से कुछ भी न बोलने का कारण पूछा तो उन्होने कहा—"यदि मैं बीच-बीच में बोलता जाता तो आपका यह कार्य न केवल कठिन हो जाता वरन एक भार ही बन जाता।

सामान्य जीवन मे भी कार्य करते समय बोलने और मौन रहने का

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अन्तर समझा जा सकता है। किसी काम को करते समय यदि बात भी करते रहा जाय तो मनोयोग उस कार्य में पूरी तरह जुट नहीं पाता। कारण कि बात करते रहने से वह एकाग्रता और दक्षता नहीं आ पाती जिसके द्वारा अधिक कुशलता तथा दक्षता से कार्य किया जा सके। बातूनी व्यक्ति का काम कभी भली भांति सम्पन्न नहीं हो पाता।

बातूनी आदत जब स्वभाव का अंग बन जाती है तो महत्व हीन बातों में काफी समय और चिन्तन नष्ट होता है। क्योंकि उस प्रसंग को अतिरेकपूर्ण और अति शयोक्तिपूर्ण बनाने में ही सारी विचार शक्ति – बुद्धि लग जाती है। जबकि मौन से एक स्वाभाविक सन्तुलन आता है। बातें भी वही की जाती है जो महत्वपूर्ण आवश्यक हों। कम बाते स्वाभाविक ही गम्भीर भी होती हैं अतः लोक व्यवहार में भी मौन अथवा मितभाषण व्यक्तित्व को प्रभाव पूर्ण बना देता है।

निन्दा-स्तुति, वाद विवाद, खण्डन मण्डन, कहा सुनी और कटुता बढ़ाने वाले प्रसंग भी प्रायः वाचालता के कारण ही उत्पन्न होते हैं। क्योंकि वाचाल व्यक्ति कोई भी बात बिना सोचे समझे कहने का अभ्यस्त रहता है और किसी प्रसंग पर बोलते समय इस बात का ध्यान नहीं रखता कि इस तरह कहने का क्या प्रभाव होगा। यदि मितभाषण को अपने स्वभाव का अंग बना लिया तो न केवल दूसरों की बात शांतिपूर्वक सुनने का अभ्यास बनता है वरन वाद विवाद तथा कहासुनी हो जाने वाले प्रसंगों में पड़ने की स्थिति भी दूर ही रहती है दूसरे शब्दों में कहे तो उससे प्रसंग की गम्भीरता अनुभव करने की क्षमता उत्पन्न होती है।

अधिक बाते करने वाले व्यक्ति तुरन्त उत्तेजित हो उठते हैं। क्योंकि वाचालता के कारण मनुष्य की प्राण शक्ति नष्ट होती रहती है और तज्जनित मानसिक दुर्बलता व्यक्ति को असहिष्णु बना देती है। व्यक्ति को जिस प्रकार जल्दी क्रोध आ जाता है उस प्रकार वाचालता के कारण मानसिक दृष्टि से दुर्बल भी शीघ्र उत्तेजित हो उठता है। उत्तर प्रत्युत्तर से दोनों पक्षों में क्रोध बढ़ता है और बात सुलझने की अपेक्षा उलझती ही जाती है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

वाणी के अपव्यय को रोकना—प्रत्येक मनीषी ने आवश्यक ही नहीं अनिवार्य बताया है। मनोविज्ञान वेत्ताओं का कहना है कि मौन से विचार शक्ति बढ़ती है। जो व्यक्ति मौन रहते हैं उनकी बुद्धि, अपेक्षाकृत अधिक स्थिर तथा सन्तुलित रहती है,संतुलित विचारोंवाला हानि-लाभ, हित-अहित के प्रसंगों पर बड़े धैर्यपूर्वक सोच-समझ सकता है। संकट या आपत्ति के समय मौन द्वारा प्रखर की हुई विचार शक्ति बड़ी सहायक सिद्धि होती है। कभी भी देखा जा सकता है कि जब मनुष्य किसी गहन प्रसंग पर सोचना चाहता है तब वह एकान्त की तलाश करता है। न तो वह उस समय बोलता और न किसी से बात ही करता है। बोलना और विचार दोनों क्रियायें एक साथ नहीं हो सकती। विचारक जितने गहरे मौन में उतरता जाता है समस्याओं का सार्थक हल खोज लाता है। महात्मा गांधी को जब-जब किसी विकट समस्या पर विचार करना होता तब-तब वे कई दिनों तक मौन व्रत ले लिया करते थे। सप्ताह में एक दिन तो वे मौन रखते ही थे, उनका कहना था कि मौन से आत्मिक बल बढ़ता है। आत्मिक बल बढ़ाने वाले मौन के साथ और बातें भी जुड़ी होती हैं। संयम की दृष्टि से यहां उसका अर्थ व्यर्थ बकवास में होने वाली शक्ति का बचाव करना ही है।

वाचालता न केवल मानसिक शक्तियों को नष्ट करती है वरन् उससे अध्यात्मिक दृष्टि से भी हानियां ही हानियां होती हैं। क्योंकि मुँह से उच्चारित किया गया प्रत्येक शब्द हमारी चेतना पर एक जमिट छाप छोड़ जाता है जो हमारे स्वभाव और चरित्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका रखता हैं। शास्त्रकारों ने शब्द को ब्रह्म की संज्ञा दी है। शब्द मे बड़ी सार्थकता है।

हम जब किसी शब्द का उच्चारण करते हैं तो उसका प्रभाव न हमारे गुप्त मान पर पड़ता है अपितु सारे संसार पर भी पड़ता है क्योंकि शब्द कभी नष्ट नहीं होता। उसका उच्चारण होते ही वह वायुमंडल गूँजने में लगता है। और अपने समान धर्मी व्यक्ति के मन से टकरा कर उसमें तदनुकूल प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

मंत्र शक्ति का आधार भी शब्द ही हैं । हमारे मनस्वी ऋषियों ने मंत्रशक्ति द्वारा अनेक आश्चर्यजनक कार्य सम्पन्न किये हैं । मंत्र आखिर सशक्त, तेजस्वी एवं गूढ़ शब्दों की ध्वनियां ही तो हैं, इन शब्दों से न केवल मानसिक वरन् भौतिक जगत् में भारी उलट फेर हुए हैं । इसका एकमात्र कारण मंत्रों के पीछे ऋषियों की अनुभव जन्य ज्ञान युक्त वाणी की प्राप्त शक्ति भरी रहती है । शब्द की इसी अद्भुतशक्ति के कारण मनीषियों और उपनिषदों ने प्रत्येक शब्द के प्रति अत्यन्त सावधान रहने का संकेत किया है । जो काम हम वर्षों में नहीं कर पाते उसे मनस्वी और पुरुषार्थी व्यक्ति अपने चुने हुए शब्दों की शक्तिसे अल्पावधि मे ही कर सकते हैं । क्योंकि उनकी वाणी में संयम के कारण अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक शक्ति आ जाती है ।

वाणी संयम का पहला अभ्यास मितभाषण है । जहां आवश्यक हो वहाँ नपे तुले शब्दों में अपनी बात कही जाय । जहां एक शब्द से काम चल सके वहां दूसरा शब्द न बोला जाय । इस मित भाषण का जो प्रभाव पड़ता है वह अधिक बोलने से नहीं होता । क्योंकि तब समग्र मानसिक शक्ति उन थोड़े से शब्दों में ही समाविष्ट हो जाती है । न केवल मानसिक शक्ति वरन् अधिक बल भी उस सक्षिप्त शब्दावली को प्रभावपूर्ण बनाने में लग जाता है । और अनावश्यक बोलने में खर्च होने वाली मूल्यवान शक्ति भी नष्ट होने से बच जाती है ।

वाणी के संयम के लिए सोच समझकर हर वाक्य तोलकर बोलना आदि अभ्यास किए जाते हैं । अपनी वाणी से जो कुछ निकल गया उसी को सही सिद्ध करने के आग्रह की अपेक्षा अधिक प्रामणिक बात, अधिक उपयुक्त ढंग से कहने का उत्साह होने से वाणी का शोधन होता रहता हैं । यदि अपनी मनोभूमि इस स्तर की है तोसुझाव परामर्श देने वालों की कमी नहीं रहती । उन्हें सुनकर स्थिर बुद्धि से उनका विवेचन करके अधिक प्रामणिक स्तर पाने का क्रम सहज ही चलता रह सकता हैं । इस प्रकार स्वत; अपनी तथा अपने सम्पर्क के व्यक्तियों की मानसिक शक्तिका निरर्थक

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

व्यय बड़ी मात्रा में बचाया जा सकता है। और उस शक्ति का उपयोग आत्मिक प्रगति की दिशा में अग्रसर करने के लिए किया जा सकता है। जो बोलें वह सोच समझकर ही बोले। दूसरे व्यर्थ वाद विवाद भी उत्पन्न नहीं होता। क्योंकि सुनने वाले की मनोभूमि और प्रकृति देखकर ही कुछ कहा जाता है। विचारकों ने इसे ही बुद्धिमत्ता कहा है और बताया है कि—'बुद्धिमान व्यक्ति बोलने से पहले सोचते जबकि मूर्ख व्यक्ति बोलता पहले है, सोचता समझता नहीं और विचार करता भी है तो बोलने के बाद में।' इसलिए यथासम्भव कम से कम बोला जाय और जो बोलना चाहिए बोलने से पूर्व उस पर विचार किया जाना चाहिए।

मितभाषण के साथ-साथ मधुर भाषा भी वाणी संयम का एक अंग है। कटु बोलने और कर्कश व्यवहार करने के कारण हृदय में जो दुर्भावनायें उत्पन्न होती है वे भी हमारी शक्तियों को नष्ट करती हैं इसलिए तैत्तिरीय उपनिषद् के ऋषि ने ईश्वरसे प्रार्थना की है—

'जिह्वा में मधुमत्तमा'

अर्थात्—हे ईश्वर मेरी जिह्वा सदैव मधुर वचन ही बोले मैं कभी कटु कर्कश और कुवचन द्वारा अपनी वाणी कलंकित न करु।' कटु अभद्र और अशिष्ट शब्द जहां अपने चारों ओर के वातावरण को कलुषित और और अमंगल जनक बनाते है वही अपने तथा दूसरों के जीवन को कष्टप्रद और अशांत भी बनाते है। क्योंकि शब्द अमृत और विष दोनों का काम करते है। जब वाणी सत्य, प्रफुल्लता बढ़ाने वाली, निष्कपट, मधुर और हितकर होगी तो वह अमृतमय बन जाती है। अपने लिए भी वह शीतलता और शांति प्रदान करती है, तथा औरों की प्रफुल्लता और प्रसन्नता में भी अभिवृद्धि करती है। इसीलिए संत कबीर ने कहा है—

ऐसी वाणी बोलिये मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपुही शीतल होय॥

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

गोस्वामी तुलसी दास ने मधुर भाषण को वशीकरण मन्त्र बताते हुए कहा है–

तुलसी मीठे वचन ते, सुख उपजत चहुं ओर ।
वशीकरण एक मंत्र है, तज दै वचन कठोर ।।

कठोर वचन कटुभाषण वाणी को विषाक्त कर देते है । उससे औरों का हृदय तो दग्ध होता ही है अपना आन्तरिक संतुलन भी बिगड़ता और चित्त में बेचैनी परेशानी से लेकर वैरभाव शत्रुता जैसी विध्वंसक भावनाये उत्पन्न होने लगती हैं ।

कहा जा सकता है कि सत्य बोलने का व्रत लेने पर कोई सच्चाई इतनी कटु भी हो सकती है कि सुनने वालों को बुरी लगे । वैसी स्थिति में अनावश्यक और अप्रिय सत्य बोलना भी वाणी के असंयम में गिना गया है । क्योंकि बोलना वही आवश्यक है जहां कि उससे किसी का कोई हित सधता हो । आवश्यक अनुपयोगी और अप्रिय सत्य को भी मनीषियों ने निषिद्ध बताया है और सत्य भाषण की व्याख्या करते हुए कहा है कि–

अनुद्वेग करं वाक्यं सत्यं प्रियहितं चयत्

अर्थात्--जिनसे सुनने वालों को दुख न हो, जो प्रिय हो तथा जो हित के उद्देश्य से कहे गये हों ऐसे सत्य वचन बोलना ही धर्म सम्मत हैं ।

वाणी के संयम के ये सभी गुण आ जाने चाहिए । दूसरों को दुःख पहुँचाने वाले (कर्कश, कटु) अप्रिय तथा व्यर्थ की बातें करने जैसी मलीनताओं से मुक्त वाणी ही वाक्व्यवहार के द्वारा मानसिक शक्तियों को अपव्यय से रोक कर उन्हें संयमित निग्रहीत करती है

अधिकांश व्यक्ति यह जानते हैं । अथवा थोड़े से प्रयास से जान सकते हैं कि कब कितना बोलना ठीक है । किन्तु अन्दर से कुछ कहने की हुड़क जब उठती है तो उनसे रहा नहीं जाता । उस पर नियन्त्रण न रहने से वे न ठीक से विचार कर पाते है न शब्दों को तोल पाते हैं और अनर्गल

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बोल पड़ते हैं। मौन के अभ्यास से बोलने की प्रकृति पर अंकुश रखने की क्षमता आ जाती है। उसके विकसित होने वाणी के संतुलन के अनेकानेक प्रयोग करने की स्थिति पैदा हो जाती है। अस्तु मनः संयम के साधक को मौन साधना का कुछ न कुछ क्रम बनाकर रखना ही चाहिए। मौन का अर्थ यह नहीं है कि मुँह से कुछ न कुछ बोलते हुए हाथ तानने या लिखकर बात करने का क्रम अपनाया जाय। उससे मौन साधना के सत्परिणाम प्राप्त नहीं होते, शब्दों का उच्चारण भले ही न किया जाता हो पर बोलने की वृति दूसरी तरह से तो व्यक्त होती है, और जो शक्ति बोलने में खर्च होती थी वह उस विषय में होने लगती है। मौन का अर्थ आन्तरिक है बाह्य क्रियाओं का अपने पर प्रभाव न होने देना, स्वयं को उनसे निरपेक्ष रखने का नाम मौन है। इस तरह का मौन तो सोते या अन्य कार्य करते हुए भी रखा जाता है वह स्वभावतः है, वाणी का संयम करने के लिए प्रत्येक मौन साधक को थोड़ा बहुत समय मौन साधना के लिए नियत रखना चाहिए

इसका नियमित अभ्यास असाधारण महत्व रखता है। कम से कम सप्ताह में एक दिन या कुछ घण्टे ही सही मौन रहा जाय। जिसे जबान बन्द रखने तक ही सीमित न किया जाय वरन् मन की वृत्तियों को भी इधर उधर बहकने से रोका जाय और उन्हें अभीष्ट दिशा में नियोजित किया जाय। जबान बन्द रख कर इशारों द्वारा या लिख कर हफ्तों तक रखे गये मौन की अपेक्षा मानसिक प्रवृत्तियों पर अंकुश लगा कर किया गया मौन अधिक और असाधारण महत्व रखता है। मौन द्वारा, वाणी के संयम द्वारा बहिर्मुखी दिशा से तथा विचार संयम द्वारा आन्तरिक दिशा में मानसिक शक्तियों का अपव्यय होने से रोक लिया जाय तो फिर इन्द्रियों का संयम आसान हो जाता है। क्योंकि मन के द्वारा ही तो इन्द्रियां प्रेरित होती है तथा शक्तियों का क्षरण करती है। यदि मन को संयमित नियंत्रित कर लिया जाय तो इन्द्रियों का संयम इसी कारण सहज सरल हो जाता है।

इन्द्रिय संयम–ब्रह्मचर्य

सामान्य रूप से संयम का अर्थ इन्द्रिय संयम ही लगाया जाता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कहा जा चुका है कि संयम को इन्द्रिय संयम तक ही सीमित नहीं किया जा सकता किन्तु फिर भी उसे संयम का एक महत्वपूर्ण अंग मानने से इन्कार भी नहीं किया जा सकता। मानसिक संयम का सूक्ष्म रूप हर एक की समझ में नहीं भी आता। इन्द्रिय संयम का स्थूल रूप समझ कर उससे सम्बन्धित वृत्तियों के संयम की बात अधिक सुगमता से समझ में आ जाती है। विचार क्रिया या प्रवृत्ति के रूप में व्यक्त तो इन्द्रियों के माध्यम से ही होते हैं अस्तु मानसिक संयम का प्रभाव भी इन्द्रिय संयम के रूप में ही परिलक्षित होता है।

जिन इन्द्रियों के माध्यम से शक्तियों का क्षरण होता है उनमें मुख्य है जननेन्द्रिय, स्वादेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रियां इन इन्द्रिय माध्यमों से शक्ति क्षरण की प्रेरणा सर्व प्रथम मन में ही उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिए काम वासना को ही लें सर्व प्रथम मन में ही कामुकता के विचार आते हैं और वे आगे बढ़कर मनुष्य का यौन जीवन असंयमित और उच्छृखल बना देते है। इसी प्रकार मन में स्वाद लेने की लिप्सा-आकांक्षा तरह तरह की खाद्य वस्तुओं को चखने और खाने के लिए प्रेरित करती है। स्पर्श सुख की आकांक्षा भी आराम से पडे रहने की चाह के रूप में उत्पन्न होती हैं और महत्वपूर्ण कार्यों में भी आलस्य और प्रमाद होने लगता है।

इन्द्रियों को इन व्यर्थ और हानिकारक दिशाओं में लगाये रहने से अपनी शक्तियों को किन्हीं उद्देश्य पूर्ण कार्यों में नहीं लगाया जा सकता। कामोपभोग में लीन रहने पर जीवन के दूसरे आवश्यक पक्षों की ओर ध्यान ही नही जाता उसी प्रकार स्वाद लिप्सा से कारण उचित अनुचित आवश्यक अनावश्यक वस्तुयें खाते रहने के स्वास्थ्य चौपट होता है। आलस्य प्रमाद से होने वाली हानि तो सभी जानते है। और इन हानिकारक व्यर्थ दिशाओं में अपनी शक्तियों का दुर्व्यय-अपव्यय मुख्यतः मानसिक विकृतियों के कारण ही होता है।

फिर भी ब्रह्मचर्य स्वाद संयम और श्रम व समय का सदुपयोग करने के लिए इन्द्रियों को प्रशिक्षित और अभ्यस्त बनाने की आवश्यकता हैं। यद्यपि

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

इनकी जड़ मनुष्य के मन: क्षेत्र में रहती है लेकिन इन विकारों में से होने वाले शक्ति क्षरण में इन्द्रियां सक्रिय भूमिका निभाती है इसलिए इनका उल्लेख इन्द्रियों संयम अन्तर्गत आता है। यदि इन्द्रियों को इस प्रकार शिक्षित और अभ्यस्त किया जाय साथ ही साथ मन को भी साधते रहा जाय तो संयम के महत्त्वपूर्ण सत्परिणाम देखे जा सकते है।

मन में काम विकार हो तो भी सामाजिक परिवेश तथा मर्यादायें व्यक्ति को अवांछनीय रूप से उच्छृखल नही बनने देती। यदि सामाजिक मर्यादायें न रहें तो समाज में फिर यौन उच्छृखलताओं का ताण्डव ही होने लगे। सामाजिक मर्यादायें बाहरी दबाव डालकर व्यक्ति को अनैतिकता न बर तने दे पर मानसिक व्यभिचार तो उस आधार पर नहीं रोका जा सकता यही कारण है कि जहाँ सामाजिक मान्यतायें उद्धत्त काम क्रीड़ा को गर्हित दृष्टि से देखती है वहाँ अपेक्षा कृत कम यौन अपराध और यौन रोग होते हैं। उन देशों में यौन रोगों की बाढ़ सी आयी हुई है जहाँ काम वासना को शारीरिक आवेग का ही एक रूप मान लिया गया है। भूख और निन्द्रा की तरह उसे शरीर की आवश्यकता और छीक जम्हाई की तरह शरीर की मल विसर्जन प्रक्रिया के अन्तर्गत ही काम वासना को भी मान लिया गया है। पश्चिमी देशों में जहाँ काम वासना को स्वाभाविक मान लिया गया है। वहां इस विकृति के कारण होने वाले अन्य तरह के दुष्परिणाम प्रत्यक्ष देखे जा सकते हैं।

भारतीय संस्कृति में इस सम्बन्ध में जो मानदण्ड निर्धारित किये हैं और काम संयम को जो महत्व दिया है। वह इसलिए भी महत्वपूर्ण है। प्राचीन काल में योगियों ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से इस तथ्य को अच्छी तरह जाना था और प्रतिपादित किया था कि वह प्राण शक्ति जो काम सेवन में क्षरित होती है मनुष्य के जीवन का मूल आधार है। उस शक्ति के स्थूल स्वरूप को ही वीर्य का नाम दिया गया और बताया गया कि यह जब क्षीण होने लगती हैं तो स्वास्थ्य चौपट होने लगता है—मनुष्य मृत्यु का अकाल ग्रास बनने लगता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तथाकथित प्रगति वादी अब तक इस प्रतिपादन को कपोल कल्पित और मिथ्या ही मानते रहे। पर अमेरिका के वैज्ञानिकों ने इस दिश में जो अनुसंधान किये उनसे इन निष्कर्षो पर पहुँचा जा सका कि वास्तव में यह जीवन शक्ति का आधार है। उस दिशा में किये गये अनुसंधानों का निष्कर्ष संक्षेप में इस प्रकार है—वह वीर्य कोश जो स्त्री के डिम्ब में पहुँचते हैं–गर्भ धारण के वाद विकसित होने लगते हैं। प्रारम्भ में ये कोष मस्तिष्क में ही संचित होते हैं। भारतीय तत्वदर्शियों का इस सम्बन्ध में मत है कि बच्चा इसी कारण परम हंस जैसी स्थिति में रहता है यह वीर्य शक्ति और दृढ़ता प्राप्त करे इसके लिए बालक को सात्विक और भाव भरे आहार की आवश्यकता होती है ऐसा दूध माता के दूध के अतिरिक्त दूसरा नही होता पर कदाचित आयु बढ़ने के साथ मां उतना दूध न पिला सके तो दूध की आवश्यकता गौदुग्ध, बकरी अथवा भैंस के दूध को हलका करके पूरा करना चाहिये। इसके बाद जैसे जैसे शरीर में शक्ति का संचार हाता है क्रमशः आहार पद्धति में सावधानी बरतने की आवश्यकता भी बढ़ती जाती है। १० वर्ष की आयु तक वीर्य दोनो भौंहों के बीच वाले स्थान में आ जाता है इस समय बच्चे को अधिकांश अलोना आहार फल फूल दूध आदि ही देना चाहिये। गुरुकुल में ५ वर्ष की आयु में ही बालक पहुँचा देने का प्राचीन उद्देश्य बच्चे को गृहस्थों के अनुचित आहार से बचाये रखना ही होता था। इस आयु में बच्चे में अनुकरण की प्रवृत्ति रहती है तीखा कडुवा भोजन वह इसीलिए करने का इच्छुक रहने लगता है क्योंकि घर के सदस्य उसका उपभोग करते हैं।

नौ से १२ वर्ष तक वीर्य शक्ति भौंहों से उतर कर कण्ठ में आ जाती है प्रायः इसी समय बच्चे के स्वर में भारी पन और कन्याओं के स्वर में सुरीला पन आता है अभी तक लगभग दोनों की ध्वनि एक जैसी होती थी अब बच्चे के स्वर में पुरुषोचित लक्षण झलकने लगते हैं। इस आयु में विपरीत लिंग का आकर्षण पैदा होने लगता है अतएव बालक बालिकाओं का सम्पर्क अलग अलग कर दिया जाना चाहिए। इन दिनों असावधानी हो जाने का परिणाम बच्चों के जीवन पर कुठाराघात सरीखा पड़ता है। कुसंग अवांछनीय वाता-

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

वरग अनुचित क्रियायें अथवा किसी भी तरह उसमें काम विकार प्रवेश कर गया तो वह कच्चा वीर्य मंथन प्रारम्भ कर सकता है जिसके कारण युवकों को जीवन भर स्वप्न दोष, वीर्यपात और शीघ्र-स्खलन की बीमारियाँ लद जाती हैं जो न केवल उसे स्वास्थ्य की दृष्टि से वरन् मानसिक दृष्टि से भी हीन बना देती हैं। ऐसे बच्चे बौद्धिक दृष्टि से बिलकुल कमजोर होते हैं। नास्तिकता कोई सिद्धान्त नहीं एक प्रकार का रोग है जो मानसिक कमजोरी के कारण होता है। प्राचीन काल में बालक की वीर्य रक्षा पर ध्यान रखा जाता था इससे उसकी विचार क्षमता ऊर्ध्वमुखी बनी रहती थी। ऊर्ध्वरेता चिन्तन ही जीवन के यथार्थ लक्ष्य और ब्रह्म की विराटता की अनुभूति कर सकता है।

११ से १६ वर्ष की आयु में वीर्य मेरुदण्ड से होता हुआ उपस्थ की ओर बढ़ता है और मूलाधार चक्र में अपना स्थान बना लेता है। काम विकार जब मन में उठता है तो मूलाधार चक्र के तुरन्त उत्तेजित हो उठने का यही कारण है। कामेन्द्रिय इसी क्षेत्र में सम्मिलित है। ऐसी स्थिति में ब्रह्मचर्य को सम्हाल पाना कठिन हो जाता है।

२४ वर्ष की आयु तक यह वीर्य—शरीर में पूरी तरह व्याप्त हो जाता है। और अंग अंग को पुष्ट तथा बलिष्ठ बनाता है। ऋषियों ने इसी तथ्य को काव्यात्मक ढग से यों गाया है–

यथा पयसि सर्पिस्तु, गूढ़श्चेक्षौ रसौ यथा।
एवं ही सकले काले शुक्रं तिष्ठति देहिनाम्॥

अर्थात् जिस प्रकार दुग्ध में घी, तिल में तेल, ईख में मीठापन तथा काष्ठ में अग्नि तत्व सर्वत्र विद्यमान रहता है उसी प्रकार वीर्य सारे शरीर में व्याप्त हो जाता है।

इसके बाद भी ब्रह्मचर्य उसी प्रकार आवश्यक रहता है [भगवान शंकर अपने पुत्र कुमार सम्भव को सभी सिद्धियों का आधार बताते हुए कहते है–

सिद्धे विन्दु महायत्ने किन सिद्धयति भूतले।
यस्य प्रसादान्महिमा ममाप्येतादृशो भवेत्।"

'जिसने यत्नपूर्वक अपने वीर्य को सिद्ध कर लिया है उसके लिए इस

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पृथ्वी में कुछ भी दुर्लभ नहीं रह जाता। सिद्ध वीर्य पुरुष तो मेरे समान समर्थ हो सकता है।"

प्राचीन काल से अब तक जितने भी महापुरुष हुए है उन्होंने सर्व प्रथम काम वासना को नियंत्रित किया है। क्योंकि कामुक चित्त न अन्य दिशाओं में सोच पाता है और न ही उससे किसी कार्य की व्यवस्थित योजना तैयार हो पाती है। और विकार तो जबरदस्ती या किसी काम में व्यस्त हो कर भी शामित किये जा सकते हैं पर काम विकार ऐसा है जो जब उठता है तो उसे नियत्रित कर पाना कठिन ही नहीं लगभग असम्भव भी हो जाता है। इसे खुले रूप में व्यक्त होने दिया जाय तो नैतिक पतन, चरित्र भ्रष्टता आत्म ग्लानि, निर्बलता, रोग, अशक्ति और सामाजिक अपमान जैसे दुष्परिणाम एक साथ भुगतने पड़ सकते है।

और यदि अपनी वासना को वश में कर लिया जाय तो वह मन जो निरन्तर कामुक चिन्तन में ही व्यस्त रहता था आसानी से किसी काम में लगाकर सफलता और महानता प्राप्त की जा सकती है। कोई बड़ा काम करना हो, महान उद्देश्य प्राप्त करने हों तब तो ब्रह्मचर्य उसी प्रकार अनिवार्य हो जाता है जिस प्रकार किसी मकान का निर्माण करते समय उसके लिए पूँजी और श्रम का एकत्री करण। पूँजी यदि पास में न हो, न उसकी प्राप्ति के लिए श्रम ही किया जाय तो कल्पना में भले ही कोई मकान निर्मित कर लिया जाय यथार्थ में उसका कोई अस्तित्व नहीं बन पाता। उसी प्रकार बड़े उद्देश्यों की पूर्ति के लिए यदि इस प्राण शक्ति का संचय न किया जाय और उसका अपव्यय न रोका जाय तो महान उद्देश्य केवल कल्पना में ही बने रह सकते है। महात्मा गाँधी ने जब स्वराज्य प्राप्ति का महान् लक्ष्य अपने सामने रखा तो उन्होंने अपनी इस प्राण शक्ति को सामान्य जीवन में भी खर्च करना बन्द कर दिया और सामान्य दाम्पत्य सम्बन्धों को उर्ध्वगामी बना कर ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर लिया। उस समय उनकी आयु ३५-३६ वर्ष की थी, पर उन्होंने इस वय में ही ब्रह्मचर्यव्रत लेकर साधारण स्थिति में रहते हुए भी स्वराज्य प्राप्ति जैसे महान लक्ष्य प्राप्त करने योग्य साधन और सामर्थ्य जुटाने में सफ-

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

लता प्राप्त की। स्वराज्य प्राप्ति में यद्यपि हजारों लाखों लोगों का योग-दान रहा पर गाँधीजी सबके प्रेरणा स्रोत और मार्ग दर्शक बने।

कहने का अर्थ यह है कि बड़े उद्देश्य प्राप्त करने और सामान्य जीवन में भी तेजस्विता तथा प्रभाव शीलता उत्पन्न करने के लिए काम वासना का नियंत्रण आवश्यक है। जो लोग इस तथ्य की ओर ध्यान नहीं देते और अपनी जीवनी शक्ति को फूहड़ ढंग से नष्ट करते रहते है उन्हें सामान्य जीवन में भी असफलता, म्लानता और निराशा का सामना करना पड़ता है। क्योंकि तब अन्य आवश्यक कार्यों में लगाने योग्य शक्ति भी तो नहीं बच रहती। इन दिनों कामुक उच्छृंखलताओं के जो सामाजिक और व्यक्तिगत दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं। वे किसी से छुपे हुए नहीं है। स्त्री पुरुष के अनैतिक सम्बन्धों से उत्पन्न होने वाला चरित्र संकट और व्यक्तिगत रूप से इस अनाचार के कारण घृणित बीमारियों का आक्रमण किसी के लिए अनजानी बात नहीं है।

इसके मूल में यौन जीवन के प्रति बदलता हुआ दृष्टि कोण ही है। किसी जमाने में कामुकता या यौन सम्बन्धों को अत्यन्त मर्यादित और मर्यादा से जरा भी हटने पर बेहद घृणित तथा निकृष्ट समझा जाता था। लेकिन जब से इसे सहज स्वाभाविक समझा जाने लगा और इस तरह मर्यादाओं, नैतिक बन्धनों को अनावश्यक बताया जाने लगा तभी से ये दुष्परिणाम सामने आने लगे। स्त्री पुरुष पहले भी साथ रहते थे, परिवार के सदस्यों में कई महिलाएँ युवतियाँ और वयस्क पुरुष होते हैं पर कोई गड़बड़ी नही आती। कारण कि लोगों ने इस सम्बन्ध में बनायी गयी मान्यताओं को लक्ष्मण रेखा और अनुशासन भंग को अक्षम्य अपराध समझ रखा था। लेकिन अब जबकि इसे सहज स्वाभाविक समझा जाता है तो काम विकृति उभड़ कर सामने आती है।

वैसे भी जिसका मन किसी वस्तु या व्यक्ति में आसक्त होता है तो उसकी निकटता न मिलने पर दुख होता है। सामान्य स्थिति में ही आसक्ति दुख की जननी बन जाती है तो फिर उसके साथ काम भी जुड़ा हो तो दुख कितना बढ़ जाता होगा? काम विकार की उत्पत्ति का कारण भी आसक्ति और विकृत चिन्तन ही है। स्त्री पुरुष के शरीरों की भिन्नता और उनका

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आकर्षण नहीं चिन्तन की विकृति और भावनाओं की निकृष्टता व्यक्ति को कामुकता के गर्त में धकेलती है। अन्यथा स्नेह, बिशुद्ध प्रेम और परस्पर निष्ठा को विकसित करने पर स्त्री पुरुष एक और एक मिलकर ग्यारह होने की उक्ति चरितार्थ कर सकते हैं। जबकि होता उल्टा ही है। दम्पति भी इस विकृति के कारण एक दूसरे के विकास में सहयोगी होने के स्थान पर एक दूसरे के स्वास्थ्य और आत्मिक स्तर को गिराने वाली शत्रुता बरतने लगते हैं।

कामुक और विषयी व्यक्ति का स्वेच्छा चारी तथा स्वार्थी होना भी निश्चित है। ऐसे व्यक्ति न किसी मर्यादा अनुशासन को मानते है न अपने साथी के स्वास्थ्य तथा शरीर का ध्यान रखते हैं। यह स्वेच्छा चारिता अन्य क्षेत्रों में भी अपना रंग दिखाती है। दाम्पत्य जीवन में ही मर्यादाओं को न मानने का स्वभाव अन्य क्षेत्रों में भी आड़े आता है और कार्य पद्धति को प्रभावित करता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से यदि कोई हानि न भी हो तो कार्य शैली में आने वाली यह त्रुटि क्या कम हानिकारक है।

इस सत्यानाशी और घातक विष की उत्पत्ति मनः क्षेत्र में ही होती है। वातावरण, ससंर्ग बुरे लोगों का साथ तथा गन्दे साहित्य का पठन व अश्लील चित्रों का देखना आदि बातें मन पर अपना विषैला प्रभाव छोड़ती है और जरा भी अवसर मिलने पर उस स्तर के विचार उठने लगते हैं। जैसे ही मनः क्षेत्र में उन विचारों को आश्रय मिलने लगता है वैसे ही व्यक्ति का आत्म नियन्त्रण ढीला पड़ने लगता है इसी कारण ब्रह्मचर्य साधक को अपनी निर्बाध गति बनाये रखने के लिए आरम्भ से ही सचेत रहने का निर्देश दिया गया है।

कामुक विचार प्रायः खाली दिमाग में ही उत्पन्न होते है। देखा जा सकता है कि जिन लोगों के पास कोई काम नही होता, जो निठल्ले ही बैठे रहते है उनकी चिन्तन धारा इसी दिशा में बहकने लगती है। कहा जाता है कि मन कभी खाली बैठना पसन्द नहीं करता और जब वह खाली हो तो अपने प्रिय विषय की ओर दौड़ने लगता है। वातावरण तथा संगति, शिक्षा के संस्कार पहले ही इस विषय को व्यक्ति का प्रिय विषय बना देते हैं।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

इसलिए मन को जरा भी अवकाश मिलते ही सुखद लगने वाला यह विषय अपनी ओर आकृष्ट करता है ।

इसके विपरीत देखा गया है कि जो लोग हमेशा किसी न किसी कार्य में व्यस्त रहते हैं जिनका चिन्तन किसी उपयोगी दिशा में लगा रहता है उनके मन में काम विकार उत्पन्न ही नहीं होता । बड़े बड़े वैज्ञानिक, चिन्तक, दार्शनिक और महान् साहित्य कार जो अहर्निश सृजन साधना में लगे रहे–को कभी काम विकारों ने पीड़ित ही नहीं किया क्योंकि व्यस्त रहने के कारण उनके मन में इस तरह के विचार ही नही आये । महात्मा गाँधी ने ब्रह्मचर्य के विषय में अपने अनुभव लिखते हुए कहा है–"काम विकार प्रायः खाली बैठने से अश्लील दृश्यों के अवलोकन या बार-बार उनका मनन करने से उत्पन्न होते है । यदि हर घड़ी व्यस्त रहा जाय तो विचारों को प्रवेश करने का कोई रास्ता ही नहीं मिलता । आचरण का बीज ही विचार है । यदि विचारों को सत्य की ओर अथवा रचनात्मक प्रवृत्तियों की ओर लगाये रहें तो ब्रह्मचर्य पालन की एक बहुत बड़ी समस्या हल हो जाती है ।

आलसी व्यक्ति कभी भी ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर पाता । क्योंकि प्रकृति ने इस शरीर में ऐसी व्यवस्था की है जिससे हर समय शरीर में अमोघ शक्ति उत्पन्न होती रहती है । उसका उपयोग शरीर और मन को निरन्तर व्यस्त रखने में नहीं किया जाता तो वह अनुचित मार्गों से नष्ट होने लगती है । ब्रह्मचर्य के द्वारा एकत्रित शक्ति को किसी उच्च उद्देश्य में लगाना भी आवश्यक है अन्यथा वह पास में पैसा होते हुए भी उसे आवश्यक कार्य में भी खर्च न करने जैसी कंजूसी हो गयी । इस प्रकार की कंजूसी कई बार हानिकारक भी होती है । धन सम्पत्ति जड़ और स्थिर है इसलिए उन्हें एक ही स्थान पर बाँध कर रखा जा सकता है पर शक्ति को जड़ बना कर रोक रखना असम्भव है भाप यदि इकट्ठी होती रहे उससे कोई काम न लिया जाय तो वह विस्फोट के साथ अपने उत्पादक यन्त्र को तोड़ देगी । बाँध बनाकर नदी का पानी रोक लिया जाय और उसे सिचाई के लिए न छोड़ा जाय । तो वह पानी अन्ततः बाँध तोड़ कर फूट पड़ेगा ।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्मचर्य के द्वारा अपनी शक्ति को निग्रहीत और एकत्रित करने वाले व्यक्ति के लिए उस शक्ति को रचनात्मक दिशा में लगाते रहना चाहिए। यदि अपने सामने ऐसा कोई लक्ष्य रख लिया जाय, कोई ऐसा कार्यक्षेत्र चुन लिया जाय जिसमें कि हम अपनी शक्ति का नियोजन कर सकें तो ब्रह्मचर्य साधना आसान हो जाती है, जो लोग कहा करते है कि ब्रह्मचर्य का पालन करना आसान नहीं है। उन्हें जो कठिनाई प्रतीत होती है वह इसी कारण कि वे ब्रह्मचर्य के निषेध पक्ष पर ही जोर देते हैं **जबकि** ब्रह्मचर्य का विधेयात्मक पक्ष भी उतना ही महत्पूर्ण है। महात्मा गाँधी जी अक्सर कहा करते थे—प्रत्येक व्यक्ति को अपना कोई ऐसा कार्य क्षेत्र चुन लेना चाहिए जिससे कि मन को विषय वासना में भटकने का रंचमात्र समय न मिले। और न उस शक्ति के व्यर्थ संचित होते रहने का दुष्परिणाम हो।'

ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में एक और त्रुटि यहहो जाती है कि उसे केवल जननेन्द्रिय का संयम भर ही समझ लिया जाता है। वासना निसंदेह उस द्वार से शक्ति क्षरण करती है पर उसका सम्बन्ध अन्य इन्द्रियों — से भी है। यो तो प्रत्येक इंन्द्रियों के अपने-अपने विषय हैं, लेकिन वे सब परस्पर इस प्रकार जुड़े है कि एक विषय दूसरे विषय को गति देता है। घड़ी के पुर्जे में जैसे एक चक्र दूसरे चक्र से सम्बन्धित रहता है, मशीनों में एक पुर्जा दूसरे पुर्जे को चलाता है उसी प्रकार इन्द्रियों में भी एक इन्द्रिय दूसरी इन्द्रिय को प्रेरणा देती है, उदाहरण के लिए आँख से कोई सुन्दर वस्तु देखी, आँख ने वह संदेश मस्तिष्क तक पहुँचाया, मन ने उसे प्राप्त करने की आकांक्षा की, बुद्धि ने उसके लिए योजना बनायी, पैर उस वस्तु तक पहुँचे और हाथों ने उन्हें पकड़ा।

काम विकार के उमड़ने और मर्यादाओं का उल्लंघन होने में भी यही प्रक्रिया काम करती है यहां तक कि उस पर प्रत्येक इन्द्रिय का प्रभाव पड़ता है। गरिष्ठ और राजसी भोजन, आरामतलबी—शरीर का स्पर्श सुख आदि बातों को कामोत्तेजना लाती है। इसीलिए कहा गया है कि

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्मचर्य की आवश्यकता केवल शरीर संयम से हीं पूरी नहीं हो जाती उसके लिए अपने सभी आचार व्यवहारों को ही सयमित करना पड़ता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि कामसेवन की तरह भी देखने सुनने और खाने पीने की क्रियाओं को भी रोक दिया जाय अथवा उन्हें कम से कम किया जाय ये क्रियायें शरीर के स्वभाविक कार्यो में आ जाती हैं कामसेवन भोजन, निद्रा आदि की तरह शरीर की आवश्यकता नहीं है पर यह आहार कर्म और श्रम से प्रभावित जरुर होता है आहारविहार और श्रम की दिनचर्या को संतुलित किये बिना ब्रह्मचर्य की साधना सफल नहीं होती । और इसकी साधना के लिए विचारों के संयमचिन्तन का परिष्कार और भी आवश्यक है। महात्मा गांधी ने ब्रह्मचर्य की आधारशिला विचार संयम ही बतायी है। अपनीं पुस्तक ब्रह्मचर्य के अनुभव में उन्होंने लिखा है- ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले बहुतेरे व्यक्ति इसलिए असफल होते है कि वे आहार बिहार में अब्रह्मचारी की तरह बर्ताव किया करते है। संयमी और असंयमी व्यक्ति के जीवन में एक अन्तर तो रहना चाहिए साम्य तो सिर्फ ऊपर ही रहता है। भेद स्पष्ट रूप से दिखाई देना चाहिये आंख से काम तो दोनों तरह के व्यक्ति लेते है पर एक देव दर्शन करता है दूसरा गन्दी कहानियां और किस्से पड़ता है। कान का उपयोग भी दोनों करते है परन्तु एक ईश्वर भजन सुनता है और दूसरा विलासमय गीतों को सुनने में ही आनन्द लेता है । भोजन दोनों करते है, परन्तु एक शरीर रूपी तीर्थ क्षेत्र की रक्षा के लिए पेट में अन्न डालता है और दूसरा देह स्वाद के लिए अनेक चीजों से भर कर उसे दुर्गन्धित कर देता है।

"ब्रह्मचर्य पालन के लिए मन वचन कर्म से समस्त इन्द्रियों के संयम के लिए पूर्वोक्तत्यागों की आवश्यकता पड़ती है। जब तक अपने विचारों पर इतना कब्जा न हो जाय कि इच्छा के बिना एक भी विचार न आने पाये तब तक पूर्ण ब्रह्मचर्य पालन की आशा नहीं करनी चाहिए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जितने भी विचार हैं उनमें से अनुपयुक्त । और विकारी विचारों को हटाकर ही ब्रह्मचर्य की साधना की जानी चाहिए ।

ब्रह्मचर्य सम्भवतः इसीलिए असाध्य लगता है कि उसके एक पक्ष पर ही जोर दिया जाता है ।यदि उसके साथ जुड़े अन्य पक्षों- व्यवस्थित और संयमित जीवन सिद्धान्तों पर भी ध्यान दिया जाय तो कोई कठिनाई नहीं है । अपने सामने एक सुनिश्चित लक्ष्य रख कर संपूर्ण मनोयोग से उसकी प्राप्ति के लिए जुट जाने तथा प्राणशक्ति के साथ खिलवाड़ को रोक देने से ब्रह्मचर्य की समग्र साधना पूरी होती है

स्वाद लिप्सा को नियन्त्रित रखें

नित्य प्रति के कार्यों में शारीरिक शक्ति का व्यय होता है । उस शक्ति की पूर्ति और शरीर का पोषण करने के लिए आहार की आवश्यकता पड़ती है । भोजन से यदि शरीर का समुचित पोषण नहीं हो पाता तो कमजोरी बढ़ती और रोग उत्पन्न हो जाते हैं, इसलिए भोजन इसी उद्देश्य से किया जाना चाहिए कि रोजमर्रा के जीवनमें किये जाने वालेकार्यों में खर्च होती रहने वाली शक्ति की पूर्ति की जाती रहे । लेकिन हम स्वाद के कारण भोजन को इस तरह विकृत कर देते हैं कि वह आवश्यकता तो ठीक तरह पूरी हो ही नहीं पाती कई और विकार भी उत्पन्न हो जाते हैं । इन दिनों रोग बीमारियां जिस बुरी तरह बढ़ और फैल रही है उसके मूल में कहीं न कहीं आहार विहार का असंयम हो है । स्वाद लिप्सा के कारण मनुष्य आहार की उपयोगिता- अनुपयोगिता न देखकर स्वादिष्ट और जायकेदार खाद्य पदार्थों का सेवन करने लगते है ।

यह इस प्रकार भी समझा जा सकता है कि मनुष्य को छोड़कर कोई भी प्राणी कदाचित् ही बीमार पड़ते है । इसका एक ही कारण है कि दूसरे सभी प्राणी अपना आहार उसके प्राकृतिक स्वरूप में ही गृहण करते हैं । पशुओं को घास, वृक्षाचारियों को फल, मांसाहारियों को मास, सड़न भोजियों को सड़न अपने प्राकृतिक रूा में ही ग्राह्य होती है । उन्हें उसी में स्वाद आता है

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और उनका पेट उसी रूप में उसे पचा लेता है। यह स्वाभाविक प्रक्रिया है। मनुष्य अपने खाद्य का चयन उसके स्वाभाविक रूप में ग्रहण करने की अपेक्षा उसे अनेकानेक अग्नि संस्कारों से विकृत बनाता है। जिन वस्तुओं का प्राकृतिक स्वाद उसके अनुकूल नहीं पड़ता वे स्पष्टतः उसके लिए हानिकारक होनी चाहिए। कच्चे मांस का न तो स्वाद उसके अनुकूल पड़ता है और न गन्ध न स्वरूप। इससे जाहिर है कि वह उसके लिए किसी भी प्रकार ग्रहण करने योग्य नहीं फिर भी प्रकृति के विपरीत जिह्वा की अस्वीकृति को झुठलाने के लिए उसे तरह-तरह से पकाने भूनने की क्रियायें करके चिकनाई तथा मसालों को भरमार करके इस योग्य बनाया जाता है कि चटोरी बनाई गई जीभ उसे पेट में घुसने की इजाजत दे दे। मनुष्य बन्दर जाति का फलाहारी प्राणी है। उसके लिए उसी स्तर के पदार्थ उपयोगी हो सकते हैं, जो कच्चे खाये जा सकें। कच्चे अन्न, स्वादिष्ट शाक तथा उपगोगी फल उसके लिए स्वाभाविक भोजन है। यदि यही आहार अपनाया जाय तो निस्सन्देह नीरोग और दीर्घजीवी रहने में कोई कठिनाई उत्पन्न न होगी।

लेकिन स्वादिष्ट और चरपरा भोजन करने की आदत हमारे अभ्यास में इस बुरी तरह आ गयी है कि वह अभ्यास-आसानी से नहीं छूट पाता। वैज्ञानिकों का निष्कर्ष है कि मनुष्य का स्वाभाविक आहार तो कच्चा भोजन ही हैं। पर वह हजारों साल से उसे आग पर पकाकर, स्वादिष्ट और जायकेदार बनाकर खाता चला आ रहा है कि उसका पाचन संस्थान कच्चे आहार को पचा ही नहीं पाता। यदि कच्चा आहार नहीं लिया जा सकता हैं तो हम कम से कम उसे स्वाद के लिये तो न खायें। स्वाद की नहीं आवश्यकता की दृष्टि से आहार ग्रहण करें और चटोरेपन की जो आदत पड़ गयी है उससे अपना पिण्ड छुड़ायें।

जीभ की आदत बिगाड़ने के लिए उसे नशीली, जहरीली चीजें खिला-खिलाकर विकृत स्वभाव का बनाया जाता है। इन नशों में नमक, मसाले और शकर, चिकनाई प्रधान हैं। इनमें से एक भी वस्तु हमारे लिए आवश्यक नहीं और न इनका स्वाद ही प्राकृतिक रूप से ग्राह्य है। नमक या मसाले यदि

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

एक दो तौले भी हम खाना चाहें तो न खा सकेंगे । नमक जरा सा खाने पर उलटी होने लगेगी । मिर्च प्राकृतिक रूप से खाई जाय तो जीभ जलने लगेगी और नाक, आँख आदि से पानी टपकने लगेगा । हींग, लौंग थोड़ी सी भी खाकर देखा जा सकता है कि उनकी कितनी भयङ्कर विकृति होती है । बालक की जीभ जब तक विकृत नहीं हो जाती तब तक वह उन्हें स्वीकार नहीं करता । घर में खाये जाने वाले मसाले युक्त आहार का तो वह धीरे-धीरे बहुत समय में अभ्यस्त होता है तब कहीं उनकी जीभ नशेबाज बनती है । अफीम और शराब जैसी कडुई वस्तुओं को भी आदी लोग मजे-मजे में पीते हैं, पीते ही नहीं उनके न मिलने पर बेचैन भी होते हैं ठीक वही हाल विकृत बनाई गई स्वादेन्द्रियों का भी होता है ।

स्वादेन्द्रिय में आ जाने वाली इस विकृति का वास्तविक कारण भी मानसिक चिन्तन में घुस जाने वाली विकृति है । जिस प्रकार कामुक व्यक्ति को कामुक चिन्तन में रस आता है और वह तरह-तरह की मानसिक कल्पनायें करता रहता है, मन ही मन उन कुकल्पनाओं का रस लिया करता है उसी प्रकार चटोरा व्यक्ति भी तरह-तरह के स्वादों का चिन्तन, उनकी कल्पनायें करता रहता है । मानसिक क्षेत्र में परिवर्तन लाना और अस्वाद व्रत या आहार संयम को साधना साहस का काम है । उसके लिए दृढ़ सङ्कल्प शक्ति चाहिए । कमजोर मन मस्तिष्क वाले सोचते हुए भी बहुत कुछ कर नहीं पाते हैं । यह भली-भांति समझ लिया जाय कि बीमारी से छुटकारे के लिए कुछ दिन परहेज कर लेना ही पर्याप्त नहीं है । उसके लिए तो अपनी आदत में ही परिवर्तन लाना पड़ेगा ।

महात्मा गांधी ने इस स्वभाव परिष्कार का स्वरूप स्पष्ट करते हुए लिखा है–"अस्वाद व्रत का ठीक से पालन हो सके इसके लिए चौबीसों घण्टे खाने की ही चिन्ता करना आवश्यक नहीं है । सिर्फ सावधानी की–जागृति की बहुत ज्यादा जरुरत है । ऐसा करने से कुछ ही समय में मालूम पड़ने लगेगा कि हम कब और कहां स्वाद करते हैं । मालूम होने पर हमें चाहिये कि हम

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अपनी स्वाद वृत्ति को कम करें। ऐसा करने वाला सहज ही अस्वाद व्रत का पालन करता है।"

हमें भी इस दिशा में एक कदम उठाना ही चाहिए। आरम्भ मे वह छोटा हो तो भी हर्ज नहीं! सप्ताह में एक दिन 'अस्वाद व्रत' रखना किसी के लिए भी कठिन नहीं होना चाहिए। रविवार या गुरुवार के दिन इसके लिए अधिक उपयुक्त हैं। उस दिन जो भी भोजन किया जाय उसमें नमक, मीठा मिला हुआ न हो। उबले हुए आलू, टिमाटर, दही, दूध, उबले हुए अन्य शाक, बिना नमक, मसाले की अलौनी दाल आदि के साथ रोटी खा लेना बिलकुल साधारण सी बात है। दो चार बार चटोरेपन की पुरानी आदत के अनुसार अखरेगा तो सही पर सन्तोष और धैर्यपूर्वक उस भोजन को भूख बुझाने जितनी मात्रा में आसानी से खाया जा सकेगा, दो-चार बार के अभ्यास से तो वह अलौना भोजन ही स्वादिष्ट लगने लगेगा। अलौनेपन का अपना एक अलग ही स्वाद है और जिन्हें वह पसन्द आ जाता है उन्हें दूसरे स्वाद रुचते ही नहीं।

महात्मा गांधी ने स्वाद संयम ब्रह्मचर्य से हुए 'संयम वनाम भोग' पुस्तक में लिखा है--"जो व्यक्ति स्वाद को ही नहीं जीत सका वह और विषयों को कैसे जीत सकता है। चटोरेपन को रोक देने से स्वाद-लिप्सा पर जो नियन्त्रण होता है वह धीरे-धीरे अन्य वासनाओं पर नियन्त्रण करने में भी सहायक होने लगता है।"

—"अस्वाद का मतलब है स्वाद न करना। स्वाद अर्थात् रस, जायका। जिस तरह दवाई खाते समय हम इस बात का विचार नहीं करते कि वह जायकेदार है अथवा नही पर शरीर के लिए आवश्यकता समझकर ही उसे योग्य मात्रा में खाते हैं, उसी तरह अन्न को भी समझना चाहिये। अन्न अर्थात् सभी खाद्य पदार्थ। इनमें फल दूध का भी समावेश होता है। जैसे कम मात्रा में ली हुई दवाई असर नहीं करती या थोड़ा असर करती है और ज्यादा लेने पर नुक्सान पहुँचाती है वैसे ही अन्न का भी है। इसलिये स्वाद की दृष्टि से किसी भी चीज को चखना व्रत का भङ्ग है। जायकेदार चीज को ज्यादा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

खाने से तो व्रत सहज ही भङ्ग होता है और आहार संयम टूटता है। किसी पदार्थ का स्वाद बढाने, बदलने या उसके अस्वाद को मिटाने की गरज से उसमें कोई वस्तु मिलाना व्रत का भंग करना है।"

"इस दृष्टि से विचार करने पर हमें पता चलेगा कि अनेक चीजें जो हम खाते हैं वे शरीर रक्षा के लिए जरुरी न होने से त्याज्य ठहरती हैं। उनके छोड़ने से विकारों का शमन हो जाता है। लेकिन इस विषय पर इतना कम ध्यान दिया गया है कि व्रत की दृष्टि से क्या खाया जाय यह विचार करना सर्वसाधारण के लिए लगभग असम्भव हो गया है।"

खाद्य पदार्थों में स्वादिष्टता--जायका उत्पन्न करने के लिए कहा जाता है कि शरीर पोषण के लिए विभिन्न तत्वों की आवश्यकता पड़ती है। जैसे—नमक, शर्करा आदि। माना कि शरीर के लिए नमक आवश्यक है। यद्यपि वैज्ञानिक प्रयोगों से अब यह सिद्ध हो चुका है कि शरीर के लिए नमक जरा भी आवश्यक नहीं है। पर जितनी मात्रा में आवश्यक समझा जाता है उतनी मात्रा स्वाभाविक खाद्य पदार्थों में—अन्नशाक और दूध में पहले से ही मौजूद है। सृष्टि के सभी प्राणी स्वाभाविक आहार में से ही अपना नमक, शक्कर की आवश्यकता पूरी करते हैं, कोई भी जीव-जन्तु ऐसा नहीं है जो अलग से इन चीजों को अपने स्वाभाविक भोजन में सम्मिलित करता हो। मनुष्य ही एक ऐसा विलक्षण जीव है जिसने प्रकृति प्रदत्त स्वाभाविक भोजन को नमक और शक्कर से चटपटा कर के ऐसा बना लिया है जिससे न तो भोजन की उपयुक्तता का पता चलता है और न मात्रा का। स्वाद ही स्वाद में जीभ धोखा खाती रहती है। अखाद्य पदार्थों को अनावश्यक मात्रा में उदरस्थ करती रहती है। फलस्वरूप हमें अपने आरोग्य और दीर्घजीवन की बलि इस चटोरेपन की वेदी पर, चढ़ानी पड़ती है।

यदि भोजन में नमक और शक्कर न मिलाया जाय, मसाले न डाले जायें तो वह अपने स्वभाविक रूप में रहेगा। फिर यह पहचानना सरल होगा कि कौन भोजन उपयुक्त है, कौन अनुपयुक्त ? अभी तो पाक कला के आधार पर मांस जैसे घृणित, दुर्गन्धित और सर्वथा हानिकारक पदार्थ तक को मिर्च

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

मसालों के बल पर स्वादिष्ट बना लिया जाता है और बेचारा मुख यह परीक्षा भी नहीं कर पाता कि वह खाद्य है या अखाद्य। यदि मसाले न पड़ें तो जीभ उसके वास्तविक गुण दोषों को जान लेगी और तब मांस गले से नीचे उतार सकना भी कठिन होगा।

बहुत से व्यक्ति यह सोचते हैं कि यदि नमक शक्कर न खाये जांय तो उससे शरीर में कमजोरी आ जायगी। यह भ्रान्ति है। शरीर को जितना नमक और जितनी शर्करा आवश्यक है वह प्राकृतिक खाद्य पदार्थों में ही उपलब्ध है। ऊपर से नमक या शकर तो केवल स्वाद के लिए ही लिये जाते हैं। यदि नमक और शकर को अपने आहार में से निकाल दिया जाय तो स्वाभाविक भूख लगने लगेगी और उसी अनुपात से भोजन किया जायगा। जायकेदार भोजन से हमारी स्वाभाविक भूख का भी पता नहीं चलता कि कब पेट भर गया? स्वाद-स्वाद में जरुरत से ज्यादा खा लेने में आती है और पेट पर अनावश्यक भार पड़ता है। आवश्यकता से अधिक भोजन कर लेने पर—अपच और तज्जनित अनेकानेक बीमारियां उठ खड़ी होती हैं। अतएव स्वाद को नहीं उपयोगिता को प्रधानता देने का दृष्टिकोण अपना लेने पर जरुरत से ज्यादा खा लेने और बीमार पड़ने की स्थिति ही नहीं आती।

आहार की आवश्यकता स्वास्थ्य के लिए है, स्वाद के लिये नहीं—इस दृष्टिकोण को विकसित करते हुए व्यक्तिगत जीवन में आहार सम्बन्धी ऐसी आदतों का अभ्यास किया जाय जिससे कि भोजन वास्तव में आवश्यकता के लिए किया जाने लगे।

उपवास उपयोगी और आवश्यक—

आहार संयम की दिशा में अस्वाद व्रत एक प्रभावशाली चरण है। सप्ताह में जिस दिन अस्वाद व्रत किया जाय उस दिन एक समय का उपवास भी रख सके तो संयम साधना और भी प्रखर होगी इससे पेट को विश्राम मिलेगा और वातावरण के कारण उत्पन्न होने वाले विकारों का शोधन होगा। महर्षियों, शास्त्रों से लेकर वैज्ञानिकों और स्वास्थ्य विशेषज्ञों तक ने उपवास के महत्व को एक स्वर से स्वीकार किया है। उपवास का अर्थ है

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य के समीप रहना । उप अर्थात् समीप और वास अर्थात् रहना । स्वस्थ और नीरोग जीवन की आधारशिला संयम ही है और उपवास से संयम में बड़ी सहायता मिलती है । क्योंकि इससे मन को असयम की दिशा में बहकाने वाली प्रवृत्ति का निग्रह करने में बड़ी सहायता मिलती है ।

स्वास्थ्य की दृष्टि से भी उपवास बड़ा उपयोगी और आवश्यक है । जिस प्रकार एक मशीन को लगातार चलते रहने पर कुछ घण्टे बन्द करने की आवश्यकता होती है उसी प्रकार अधिक एवं अभक्ष्य भोज्य पदार्थों के खाने के अत्याचार से पीड़ित पेट को भी आराम देने की आवश्यकता पड़ती है।

लेकिन हम आजकल उपवास का कुछ और ही अर्थ करते हैं । हमारी उपवास सम्बन्धी मान्यताएँ हास्यास्पद एव मूर्खतापूर्ण है । लोग उपवास के दिन तो अन्य सामान्य दिनों की अपेक्षा अधिक गरिष्ठ एवं मात्रा में भी अधिक, भिन्न-भिन्न प्रकार का मिष्ठान्न एवं पकवान्न खाते हैं । उपवास के एक दिन पूर्व से ही भोजन में भिन्नता दिखाई देती है । इसे उपवास न कहकर चटोरेपन की आदत ही कहेंगे, जिससे न तो किसी उद्देश्य की पूर्ति होती है और न स्वास्थ्य पर ही लाभकारी प्रभाव ।

उपवास शरीर में बढ़े तथा जमा स्टार्च एवं चर्बी को जिसके कारण शरीर में एसिड की मात्रा कम हो जाती है बाहर निकाल कर शरीर को स्वस्थ रखने में सहायक होता है । साधारणतः व्यक्ति यह समझ लेता है कि शरीर से मल बाहर निकल ही जाता है, भूख लगती ही है तो पेट सम्बन्धी विकार क्यों होने लगा चाहे वह कैसा भी भोजन करे उसे नुक्सान नहीं करेगा । परन्तु यह भूल है, जो खाना खाया जाता है उसमें कुछ का रस बनता है, खून बनता है, माँस, मज्जा एवं हड्डी का निर्माण होता है और शेष मल-मूत्र के रास्ते से निकल जाता है । परन्तु गरिष्ठ एवं अधिक मात्रा में किये भोजन का कुछ अंश आँतों के चारों ओर चिपक जाता है जो सडाँध पैदा करता है और रोगों को आमन्त्रित करने का कारण बनता है । उपवास इसी गन्दगी को बाहर निकाल कर पेट एवं आँतों को स्वस्थ रखने में मदद करता है ।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उपवास का अर्थ है पेट को पूर्ण आराम देना तथा भोजन को पूर्णत: त्याग देना। यह साप्ताहिक भी हो सकता है पाक्षिक अथवा मासिक भी जैसी भी स्थिति हो। तथा लम्बी बीमारी एवं रोग को देख कर लगातार क्रम में भी।

उपवास करने के पूर्व सन्ध्या समय भोजन न करके फलों का रस या उबली तरकारी ही लेनी चाहिए। उपवास के दिन काफी मात्रा में जल लेकर १-२ मील का पैदल चक्कर लगाना चाहिए तत्पश्चात् एनीमा लेना चाहिए इससे आन्तरिक सफाई अच्छी प्रकार हो जाती है। कमजोरी महसूस होने पर नीबू का पानी निकाल कर लिया जा सकता है। उस दिन पूरा-पूरा विश्राम करना चाहिए। उपवास के दूसरे दिन बड़ी सावधानी एवं धैर्य से कार्य लेना चाहिए—क्योंकि उपवास के बाद भूख जोर से लगती है इसलिये ऐसा न हो जाए कि एकदम खाने पर टूट पड़ें इससे लाभ की अपेक्षा हानि होने की सम्भावना हो सकती है। दूसरे दिन फलों के रसों से उपवास तोड़ा जाए—दोपहर या सन्ध्या को फल और सादा भोजन, रोटी, दलिया तथा उबली सब्जियां ली जावें। जीभ के असंयमी व्यक्ति किसी प्रकार उपवास तो निभा लेते हैं, किन्तु उन्हें खोलते समय संयम नहीं रख पाते, फलत: अनेक विकृतियां पैदा हो जाती हैं। उस स्थिति में उपवास से लाभ की अपेक्षा हानि भी हो जाती है।

रसना और जननेन्द्रिय के संयम से इन्द्रिय संयम की मंजिल एक सीमा तक पूरी होती है। क्योंकि शरीर की जीवनी शक्ति रस औरकाम विकार के द्वारा ही खर्च होती है। इसके लिए मन: संयम को प्राथमिकता देते हुए महात्मा गांधी ने लिखा है—हर व्रत का पालन मन वचन और काया से होना चाहिए। जो शरीर को काबू में रखता हुआ जान पड़ता है पर मन से विकार का पोषण किया करता है वह मूढ़, मिथ्याचारी है। सब किसी को इसका अनुभव होता है। मन को विकारपूर्ण रहने देकर शरीर को दबाने की कोशिश करना हानिकर है। जहां मन है,वहां वह शरीर को घसीटे बिना नहीं रहता। यह एक भेद समझ लेना जरुरी है। मन को विकारवश होने देना एक बात

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

है और मन का अपने आप अनिच्छा से, बलात् विकार को प्राप्त होना या होते रहना दूसरी बात है। इस विकार में यदि हम सहायक न बनें तो आखिर जीत हमारी ही है। हम प्रतिपल यह अनुभव करते हैं कि शरीर तो काबू में रहता है पर मन नहीं रहता। इसलिये शरीर को तुरन्त ही वश में करके मन को वश मे करने की रोज कोशिश करते रहने से हम अपने कर्तव्य का पालन करते हैं—करते रह सकते हैं।"

श्रम और समय सम्पदा को व्यर्थ न गंवायें

समय और श्रमशक्ति को मनुष्य की मूल सम्पदा कहा जाता है। कोई भी कार्य करना हो उसे समय और श्रम तो चाहिए ही। बड़े कामों में मानसिक शक्ति तो किसी एक व्यक्ति की लगे तो भी काम चल जाता है। योजना से लेकर उसके ठीक-ठीक क्रियान्वयन तक का सारा कार्य एक दो बुद्धिमान व्यक्ति कर सकते हैं। किन्तु शारीरिक श्रम तथा समय उसमें बहुतों का लगाना अनिवार्य ही हो जाता है। क्या व्यक्तिगत—क्या सामाजिक, हर स्तर पर इन्हीं के सदुपयोग के सहारे व्यक्ति उत्कर्ष पाता है। अस्तु इन सम्पत्तियों के सन्दर्भ में भी संयम आवश्यक है। अन्यथा इनका क्षरण होता रहा तो जीवन में कभी भी समुचित लाभ प्राप्त नहीं किए जा सकते। इससेवचित रखने वाली प्रकृति—स्पर्श के इन्द्रिय के असंयम के कारण ही पैदा होती है।

शरीर को आराम से रखने और कोई कष्ट न होने देने की आकांक्षा व्यक्ति को आलसी और प्रमादी बना देती है। शरीर से निरन्तर थकाते रहने वाला काम नहीं किया जाय—वहां तक तो बात ठीक है परन्तु बिल्कुल काम न करने शरीर को हर घड़ी आराम से रखना उससे कोई काम ही नहीं लेना अथवा कम से कम श्रम की बात सोचना श्रम का असंयम है।

संयम का अर्थ अपनी शक्तियों का सदुपयोग है। जहाँ शक्तियों के दुर्व्यय को रोकना संयम का एक पक्ष है वहीं उसका सदुपयोग करना भी दूसरा पक्ष है। आराम से पड़े रहने पर शक्तियों का कोई दुर्व्यय तो नहीं होता, लेकिन आलस्य करते रहने से उनका कोई उपयोग भी नहीं हो पाता।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

इसलिए सुस्त-मन्द और शिथिलता आराम तलबी की वृत्ति असंयम ही कही जायगी। असंयम के कारण हानि होती है—यह एक मान्य सिद्धान्त है। आलस्य में पड़े रहने पर कम हानि नहीं होती। सर्वविदित है कि जिस वस्तु का समुचित उपयोग नहीं होता वह अपनी विशेषता खो बैठती है। सील में पड़े हुए लोहे को जङ्ग लग जाती है और उसी से वह गलता चला जाता है खूँटे से बँधा हुआ घोड़ा अड़ियल हो जाता है, जिन पक्षियों को उड़ने का अवसर नहीं मिलता वे अन्ततः उड़ने की शक्ति ही खो बैठते हैं। पान के पत्तों की हेरा-फेरी न की जाय तो जल्दी ही सड़ जाते हैं। यही स्थिति मनुष्य के शरीर की भी है, यदि उसे परिश्रम से वञ्चित रहना पड़े तो अपनी प्रतिभा, स्फूर्ति एवं प्रगतिशीलता एवं तेजस्विता ही नहीं खो बैठता प्रत्युत अवसाद ग्रस्त होनर रोगी भी रहने लगता है।

आराम तलब मेहनत से बचने वाले लोगों की जीवन शक्ति क्षीण हो जाती है, सर्दी-गर्मी और बीमारियों से लड़ने की सामर्थ्य चली जाती है। जल्दी जल्दी जुकाम होता है, सर्दी, खाँसी सताती है, जल्दी लू लगती है, गर्मी का प्रकोप रहता है। कोई छोटी-सी भी बीमारी हो जाय तो मुद्दतों जड़ जमाये बैठी रहती है, कीमती दवादारू कराने पर भी टलने का नाम नहीं लेती। ऐसा होता इसलिये है कि वह जीवनी शक्ति जो परिश्रम करने वाले में प्रदीप्त रहती है ऐसे लोगों में मर जाती है और वे किसी छोटे-मोटे आक्रमण तक का सामना करने में असमर्थ हो जाते हैं। आलस्य में पड़े रहने—ऐश आराम का जीवन व्यतीत करने श्रमशक्ति का उपयोग न करने वाले लोगों का शरीर इतना कोमल हो जाता है कि वे सर्दी गर्मी की साधारण प्रतिकूलता भी बर्दाश्त नहीं कर पाते। जुईमुई के पौधे जैसे उङ्गली लगते ही मुर्झा जाते है उसी प्रकार ऐसे शरीर जो परिश्रम के अभ्यासी नहीं, थोड़ा सा दबाव पड़ते ही कुम्हलाने लगते हैं। बैठे ठाले आदमी बाहर से मोटे भले ही लगें पर जीवनी शक्ति की न्यूनता के कारण उनके शरीर विभिन्न प्रकार के छोटे-मोटे रोगों से ग्रसित रहते हैं। बैठे रहने के कारण जो रुग्णता उत्पन्न हुई थी, वह धीरे-धीरे परिपक्व होकर इतनी मजबूत हो जाती है कि फिर उस व्यक्ति को

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बैठे-ठाले रहने के लिए ही विवश कर देती है। वह चाहे तो भी कुछ नहीं कर पाता। हाथ पैर जकड़े-जकड़े रहते हैं। लगता है कि जिन्दगी का बोझ ढोना ही कठिन हो रहा है। इस स्थिति का मन पर प्रभाव पड़ेगा ही। आलसी शरीर में मन्द बुद्धि मस्तिष्क ही रहता हैं। जिसका शरीर फुर्तीला और मेहनती हैं, उसका मस्तिष्क भी तीव्र, एवं उर्वर रहता है। आलसी अक्सर मूर्ख होते हैं। सक्रियता को उन्होंने शरीर से स्वयं विदा किया था, वह रुष्ट होकर मस्तिष्क से भी चली जाती है। सोचने की निर्णय करने की, निष्कर्ष निकालने की मात्रा घट जाती है, मस्तिष्क सदा उलझा उलझा सा रहता है। कोई समस्या हल नहीं कर पाता। एक उलझन सुलझाने के बारे में सोचता है, दूसरी नई चार उलझनें और सामने आ खड़ी होती हैं। ऐसे व्यक्ति न तो कोई बड़ा साहस कर सकते है और न निर्द्वन्द्व रह सकते है चारों ओर उन्हें उलझनों का जाल जंजाल ही बिखरा मालूम देता है।

शरीर को श्रममें लगाये रहने परउचित दिशा में पुरुषार्थ करने से मस्तिष्क भी क्रियाशील रहता है। किन्तु जब शरीर को निष्क्रीय ही रखा जाता है तो मस्तिष्क की कार्यपद्धति भी विकृत हो जाती है उससे अवांछनीय, असन्तुलित और अव्यवहारिक बातें घुड़दौड़ मचाने लगती है। यदि किसीको अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों का रचनात्मक लाभ न लेना हो, विघटनात्मक दिशा में लगाकर उसे क्षोभ उत्पन्नकारी मार्ग में लगाना हो तो एक ही तरीका हैं-खाली बैठा रहना प्रारम्भ कर दे। बस, अनेकों तरहकी खुराफातें मस्तिष्क में सूझती रहेंगी और उन सनकों के कारण जीवन-क्रम की अस्त व्यवस्ता दिन-दिन बढ़ती चली जायगी।

आलसी व्यक्ति को इन्ही कारणों से जीवित मृतक कहा गया है और मनीषियों ने आलस्य को एक प्रकार मे आत्म हत्या बताया है। अपने भीतर सुख सुविधाये प्रदान कर सकने वाली अगणित विभूतियां भरी पड़ी हैं। पर आलस्य वश उनका उपयोग नहीं हो पाता तो उस निष्क्रिय

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

निकम्मेपन को आत्म हत्या नहीं तो और क्या कहा जाय। इसमें अपनी प्रगति के सारे द्वार अवरुद्ध होते हैं।

इसके विपरीत आलस्य छोड़ने और श्रम साधना में निरत होने से उसी तरह के लाभ उठाये जा सकते हैं जो राजा विक्रमादित्य अपने साथ रहने वाले अदृश्य वीरों से उठाया करते थे। कहा जाता है कि अलाउद्दीन के पास एक ऐसा करामाती चिराग था जिससे वह मनचाही चीजें उत्पन्न कर लेता था। यह तो कहानियों की बात है परन्तु मनुष्यको अपनी शक्तियों के रूप में ऐसे न जाने कितने देव और न जाने कितनी चमत्कारी विशेषताये मिली है जिनसे जी चाहा काम किया जा सकता है। वे देव श्रम शक्ति के रूप में हीं कार्य करते है। आवश्यकता केवल उन्हें संयमित और नियंत्रित करने भर की है। लोग बड़ी सफलताओं के लिए अपनी साधन हीन असहाय स्थिति का रोना रोते है। परन्तु आगे बढ़ना जब किसी के लिये सम्भव हो सका अथवा जिन्होंने भी प्रगति के उच्च शिखर छुए है वे निम्नतर स्थिति से ही ऊपर उठे है। किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आलस्य और प्रमाद को छोड़कर सक्रिय हुआ जायतो मनुष्य की कोई भी इच्छा, आकांक्षा अधूरी नहीं रह सकती —बशर्ते कि अपनी श्रमशक्ति का और समय सपदा का सही ढंग से उमयोग किया जात। संसार में ऐसे कितने ही महापुरुष हुए है जिन्हें अपनी इन शक्तियों का सद्उपयोग कर श्रम और समय के संयमित्त प्रयोगों द्वारा सामान्य स्तर से उच्च स्थिति तक पहुँच जाने की सफलता प्राप्त की।

अमेरिका के प्रेसीडेन्ट अब्राहम लिंकन और जार्ज वाशिंगटन दयनीय दरिद्रता से ग्रसित परिस्थितियों में जन्मे थे। उनके परिवार की स्थिति इस योग्य बिलकुल भी न थी कि वे पारिवारिक सहायता के बल पर तनिक भी आगे बढ़ सकें। यदि उनने अपनी व्यक्तिगत प्रतिभा का उपयोग न किया होता और परिस्थितियों के ऊपर ही अपने को छोड़ दिया होता तो वे किसी तरह पेट भर सकने वाले नगण्य व्यक्ति ही रह गये होते।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उनने भीतर की प्रतिभा को जागृति किया, अनवरत श्रम की साधना आरम्भ की और जो "जो करना पूरी तत्परता एवं दृढ़ता के साथ करना" का बीज मन्त्र दुहराया। साधनों के अभाव की शिकायत धीरे धीरे मिटती गई, प्रतिकूलताएँ हटती गई और अनुकूलताएँ उत्पन्न होती गई।

मनुष्य का मनोयोग अनुकूलताएँ उत्पन्न करने में साधन जुटाने में असफल नहीं रहता। आकांक्षा और सूझ- बूझ वह रास्ता निकालती ही रहती है जिससे कठिनाइयों का हल करना सम्भव हो सके। जब फरियाद जैसा सर्वथा साधनहीन व्यक्ति शीरी को प्राप्त करने की तीव्र आकांक्षा होने पर पहाड़ खोद कर नहर निकालने जैसी कठिन शर्त को पूरी कर सकता है तो कोई कारण नहीं है कि हमारी अन्तरिक प्रखरता, प्रगति के मार्ग में उपस्थिति होने वाली बाधाओं को समय-समय पर न ढूँढ़ती निकालती रहें। आवश्यकता के बल उन्हें अनावश्यक कार्यो से बचाने और उपयोगी दिशा में नियोजित भर करने की है।

हमारा बहुत सा समय और बहुत सा श्रम व्यर्थ के कार्यो में ही लग जाता है। यदि उसका ठीक ढंग से उपयोग किया जाय - अपने जीवन का व्यस्त कार्यक्रम बनाया जाय और आत्मविकास के लिए परिश्रम किया जाय तो न जाने क्या हुआ जा सकताहै। विनोबा भावे ने स्कूली शिक्षा एक छोटे से दर्जे तक ही प्राप्त की थी परन्तु उन्होंने अपने जीवन का ऐसा व्यस्त कार्यक्रम रखा कि समाज सेवा के क्षेत्र में महत्व पूर्ण कार्य करते हुए भी वैयक्तिक अध्ययन जारी रखा और वे आज संसार की प्राय: प्रमुख भाषाओं और विचारधाराओं के विद्वान् हैं। उनकी तुलना के मनीषी संसार में गिने चुने ही होंगे। शिक्षा विषयक इतनी प्रगति के पीछे कोई चमत्कार नहीं, वरन् उनका अनवरत क्रमबद्ध और मनोयोग पूर्वक किया हुआ श्रम ही है। यही राजमार्ग हम सबके लिए भी खुला पड़ा है, जो चाहे उस पर खुशी-खुशी चल सकता है। दो घण्टे निरन्तर का अध्ययत किसी व्यक्ति को तीस वर्ष में समस्त प्रमुख भाषाओं का विद्वान बन सकता है।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

श्रम के महत्व को जान लेने के बाद यह इच्छा उठना स्वभाविक हैं कि स्वयं भी श्रमशक्ति के सदुपयोग द्वारा प्रगति की जाय । लेकिन आलस्य तब यह बहाना कर भ्रमित करने लगता है कि अब तो काफी उमर गुजर गयी, अब क्या हो सकता है । बहुतसे लोग यह सोचकर चुप बैठ जाते है कि अब तो हमारी काफी उमर गुजर चुकी । थोड़ा बहुत समय बचा है उसके लिए व्यर्थ क्यों परेशान हुआ जाय । व्यर्थ क्यों परेशान हुआ जाय'— की आड़ भी केवल आलस्यवश ली जाती है । अन्यथा यह सोचना गलत हैं कि हमारी इतनी आयु तो बीत गयी, अब बूढ़े हो गये, अब क्या कोई बड़ा काम हो सकेगा । यदि कुछकर भी लियातो जब तक बूढ़े हो जायेंगे अथवा मर जायेंगे बूढ़े होने या प्रौढ़तता प्राप्त कर लेने के कारण निराश होने की आवश्कता नहीं है । प्रगति के लिए न कोई उमर होती है और श्रम के लिए न कोई आयु का बन्धन । अतः श्रम और शक्ति अपव्यय की जो गलती हो गयी, से हो चुकी । उसे अब न होने दिया जाय तथा उपयोगी कार्यो में ही श्रम करने की–समय लगाने रीति नीति अपनायी जाय ।

यह रीति नीति अपनाने से निसंदेह यह लगेगा कि वहाँ व्यर्थ प्रपंच में पड़ गये । यह आरामतलबी के अभ्यस्त शरीर का ही तर्क हो सकता हैं जो अपने को परिश्रम से बचाने के लिए किया जाता है । शरीर को जितना भी आराम-स्पर्श सुख दिया जाय थोड़ा ही प्रतीत होगा किन्तु आत्मिक प्रगति के लिए जैसे ही श्रम करने में तत्पर हुआ जायेगा और जो सत्परिणाम प्रस्तुत होंगे वे स्पर्श सुख के-आराम से रहने के आकर्षण को अपने आप ही कम कर देंगे ।

समय सबसे बड़ा धन--

मनुष्य के पास ईश्वरदत्त पूँजी समय है । यही आयु है । अतः जब तक जीवन है तब तक अपना सारा समय श्रम करते हुए बिताना

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जाहिए जितना समय आलस्य में पड़े रहकर निठ्ठल्लेपन से बिता दिया समझना चाहिए कि जीवन का उतना ही अंश बर्बाद हो गया। जो भी हमें अभीष्ट हो जो कुछ भी हम चाहते हों उसी में मनोयोग पूर्वक लग जाना चाहिए। सफलता मिलेगी। सफलताएँ अनेक प्रकार की चाहना और श्रम से कतराते रहना यह उचित नहीं। सफलताएँ अनेक मनुष्यों ने पाई हैं पर उन सबको श्रम की अग्नि परीक्षा में अपने आपको खरा सिद्ध करना पड़ा है। उद्योगी पुरुषसिंह को ही लक्ष्मी मिलती है। संस्कृत साहित्य की उस उक्ति में रत्तीभर भी सन्देह की गुञ्जायश नहीं है। आलस्य दरिद्रता का ही दूसरा नाम है। आलसी बनने का अर्थ ही दरिद्री बनाने की भूमिका तैयार करना है। निठल्लापन अमीरी का चिन्ह माना जाता है पर सही बात यह है कि श्रम के द्वारा सम्पन्नता मिलती और जब मनुष्य को आलस्य घेर लेता है तो उसका पतन आरम्भ हो हो जाता है यह मान्यता सही नहीं कि आलसी सुखी रहता है सुख तो सन्तोष में है और सन्तोष केवल कर्त्तव्य पालन करने वाले को मिलता है। जो बेकार बैठा रहता है उसकी आत्मा ही उसे धिक्कारती रहती है और दूसरे पुरुषार्थी साथियों की तुलना में उसे अपनी हीनता स्पष्ट दिखाई देती है जिसके कारण उसे पग-पग पर लज्जा और संकोच का अनुभव करना होता है। सफलता न भी मिले तो भी अपने भीतर तो सन्तोष रहता हैं कि हमने अपने कर्तृत्व में कमी नहीं रहने दी और स्वजन सम्बन्धी भी प्रशंसा करते हैं कि जो कुछ किया जा सकता था वह तो किया ही गया। इस सन्तोष एवं गर्व की तुलना में असफलता का दुःख ही हल्का पड़ जाता है। जिसने काम से जी चुराने के कारण असफलता प्राप्त की है लज्जा, संकोच और आत्म ग्लानि तो उसी को होती है और अपराधी की तरह उसे ही मुँह छुपाते रहना पड़ता है जो अकर्मण्यता की हीनता के कारण दिन-दिन पिछड़ता चला जाता है।

समय गँवाने, आराम और आलस में बैठे रहने को सुख समझने और

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आलस्य मैं बड़प्पन देखने की भ्रान्त विचारधारा को जितनी जल्दी बदला जा सके उतना ही अच्छा हैं। प्रायः लोग कहा करते है कि हमें समय का अभाव रहता है और हम आवश्यक कार्यो को भी नहीं निवटा पाते। समय के अभाव की शिकायत तभी उत्पन्न होती है जब उसका अनियोजित उपयोग किया जा रहा हो जितना समय हमारे पास है उतना ही समय महानता को प्राप्त हुए महापुरुषों को ही उपलब्ध रहा है। परन्तु उन्होने समयाभाव की कभी शिकायत नही की।

समय के श्रेष्ठतम सदुपयोग का एकमात्र उपाय है उसका सुव्यवस्थित विभाजन और तदनुसार अपने प्रत्येक कार्य का सम्पादन, यदि हम अपने दिन भर के कार्यों पर दृष्टिपात करें और उनका विश्लेषण करें तो प्रतीत होगा कि हमारा अधिकांश समय या तो आलस्य में सुस्ताते या बदन तोड़ते बीता अथवा गपशप और व्यर्थ की बकवासों में समय की बर्बादी हुई। यदि समय के महत्व को समझा जाता और उसके सदुपयोग की बात सोची जाती तो बहुत सा खाली समय निकल सकता था तथा उसका उपयोग कर अपनी योग्यता क्षमता बढ़ाई जा सकती थी।

फुरसत नहीं मिलती अवकाश नहीं रहता जैसे बहाने अनुपयुक्त है। समय का ठीक विभाजन कर लेने और हर काम मुस्तैदी तथा तत्परता से करने पर जितना अभी किया जाता है, उससे दूना बड़ी आसानी से हो सकता है। होता यह है कि हम अपने कामों को बेगार, भार समझकर आधे मन से रोते, झींखते हुए करते हैं कि फलस्वरूप काम करने की गति मन्द रहती है। बहुत देर में, धीरे धीरे थोड़ा सा काम हो सकता है। यदि पूरे मनोयोग और तत्परता से कार्य में पूरा-पूरा रस लेते हुए उसे किया जाय तो वह अधिक अच्छा और अधिक मात्रा में हो सकता है। ऐसी दशा में समय की बचत होना स्वभाविक है। इसी प्रकार जिनके कार्य बिना व्यवस्थित, बिना समय निर्धारण के होते हैं, जिनमें क्रम एवं तारतम्य नहीं होता वे भी सारे दिन घिस-घिस करते रहने पर भी इतने कम होते हैं कि उन्हें

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पूरे दिनका परिश्रम करने मेंभी संकोच होताहै । मुस्तैद और क्रमबद्ध कार्यकर्त्ता काम तीन-चार घन्टे में कर लेते हैं इतना घिस घिस करते हुए रोते झीखते लकीर पीटते वालों से दिन भर में पूरा नहीं हो पाता । यदि टाइम टेबिल बनाकर दि। भर का कार्यक्रम निर्धारित किया जाये तो पता चल जाय कि कितने थोड़े काम के लिये कितना अधिक समय खर्च किया जाया करता था। टाइम टेबिल बनाकर काम करने की आदत इतनी जादू भरी है कि मनुष्य को समय की बर्बादी न करते का अभ्यस्त बना देती है। जैसे हिसाब लिखे बिना नफा-नुकसान का कुछ पता ही नहीं चल पाता, उसी तरह बिना टाइम टेबिल बनाये क म करते रहने वाले को भी यह प्रतीत नहीं होता कि समय का उचित उपयोग हुआ या नही। अनेकों काम जो आज के कल पर टाले जाते हैं, उसका कारण भी समय का समुचित निर्धारण एवं विभाजन न कर सकने का प्रमाद ही होता है। यदि यह दोष दूर कर लिया जाय तो काम दूना होने लगे और उपयोगी कामों के लिए समय न बचने की शिकायत भी न करनी पड़े ।

यदि हम अपने शरीर को मुस्तैद, श्रमशील बनायें और आरामतलबी का अभ्यास न होने दें, समय का संयम करे —उसके सदुपयोग की बात सोचें तो थोड़े से साधनों और सामन्य प्रयत्नों से भी चमत्कारी परिणाम प्राप्त किये जा सकते है । आवश्यकता केवल इस बात की है कि आरामतलबी से बचा जाय, आलस्य को पास न फटकने दिया जाय और समय का सही सदुपयोग किया जाय।

आर्थिक संयम अर्थात् सुखी जीवन

जीवन निर्वाह के लिए हमें कई बस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है। उस आवश्कता को पूरी करने के लिए श्रम चाहिए। पर श्रम द्वारा सभी आवश्यक वस्तुएँ जुटाने में बड़ा समय चाहिए इस लिए यह व्यवस्था की

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

की गयी कि श्रम का मूल्य धन के रूप में प्राप्त कर लिया जाय और उस धन से अपनी विभिन्न आवश्यकतायें पूरी करता रहे। धन कमाने का मुख्य उद्देश्य जीवन यापन के लिए दैनिक एवं मूल आवश्यकताओं को पूरा करना ही है।

यों तो जीवन की आवश्यकतायें कितनी है इसकी कोई सीमा या कसौटी नहीं है। मनुष्य की कुछ आवश्यकताएं तो ऐसी है जो कि बहुत ही आवश्यक है कुछ बहुत ही साधारण सी हैं बहुत सी आवश्यकतायें अनिवार्य है। इस लिए अपनी आर्थिक स्थिति को देखकर ऐसी व्यवस्था बनानी चाहिए कि अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति पहले हो और फिर दूसरी आवश्यकतायें पूरी है सकें।

लेकिन बहुत से लोग धन का सदुपयोग करने की बजाय उसकी उपयोगिता झूठी शान शौकत दिखाने, फैशन परस्ती एवं दुर्व्यनों की पूर्ति में ही समझते हैं। जिनके पास इतना धन है कि वे इन कार्यों में अपना पैसा खर्च करें उनके लिए भी यह हानिकारक है और समाज के लिए भी। क्योंकि उन्हें देख कर गरीब लोग भी जिनके पास अपनी अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए भी पर्याप्त साधन नहीं रहते—इस तरह के आवश्यक कार्यों में खर्च करने लगते हैं। क्योंकि वे समझते है इसी में बड़प्पन है।

अच्छा तो यह हैकि यदि अपने पास इतना पैसा हो कि वह आवश्यकता पूर्ति में खच करने के बाद भी बचे तो उसे इकट्टा किया जाय। वह बचा हुआ पैसा आड़े वक्त काम आ सकता है। या किसी और कार्य में लगाया जा सकता है। लेकिन लोग उस ओर जरा भी ध्यान नहीं देते।

अपव्यय के कारण बर्बाद हुए समृद्ध परिवारों के और भी अनेक उदाहरण हैं। अपव्यय का एक मात्र कारण हमारी अदूरदर्शिता है। धन को हमने झूठी शान शौकत की पूर्ति का साधन मान लिया है जो केवल मनुष्य का थोथा पन ही रहा है।

यह मानना मूल है कि जितनी शान शौकत का प्रदर्शन करेंगे, जितने ठाठ बाट से रहेंगे और अपनी आवश्य ताओं को जितना अधिक बढ़ा लेगें

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

लोग हमें उतना ही सुखी समझेंगे। लोग भले ही समझने लगें कि आप सुखी हों पर इन व्यर्थ आवश्यकताओं को बढ़ा लेने से जो आर्थिक परेशानियां खड़ी हो जाती हैं वे हमें बड़ी बुरी तरह दुखी और संत्रस्त करके रख देती है। उचित अनुचित का विचार न कर जब अपनी सामर्थ्य से भी अधिक धन चाहने वाली आवश्यकतायें बढ़ा ली जाती हैं तो व्यक्ति उन कृत्रिम आवश्यकताओं के फेर में पड़कर कहीं का नहीं रह जाता है।

ये कृत्रिम आवश्यकतायें ऐसा दुर्गुण है जिससे मनुष्य अपने पैरों पर आप कुल्हाड़ी मारता है। यदि सूक्ष्म दृष्टि से गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाय तो हमें अपने जीवन में कई ऐसी घटनायें याद आ सकती हैं जो हमारे अपव्ययी स्वभाव को उजागर करती है और उथले पन और संकुचित दृष्टि कोण का प्रतीक है। वास्तविकता यह है कि जो जितना महान् होगा वह उत्तना ही सजावट और प्रदर्शन के विरुद्ध होगा। हम केवल इस प्रवृत्ति के वशीभूत होकर दूसरे हमें अपने से किसी प्रकार कम न समझें, पैसे को अनाप-शनाप खर्च करते चलते हैं। यह हमारी कभी न खत्म होने वाली अभिलाषा बन जाती है। इसके विपरीत धन को यदि सोच समझ कर खर्च किया जाय आवश्यक हो वहीं इसका प्रयोग किया जाय तो यह हमारे जीवन विकास में सहायक गुण हो सकता है। संसार में जितने भी महापुरुष, बड़े विद्वान एवं विचार वान व्यक्ति हुए हैं उन्होंने इसी गुण से काम लिया है।

मितव्ययता का जीवन में बड़ा महत्व है। यह एक असाधारण गुण है। जो लोग इसके महत्व को नहीं समझते और उसकी शक्ति से अपरिचित रहते हैं वे हमेशा आर्थिक कठिनाइयों में फँसे रहते हैं साथ ही परिवार की उन्नति रोक देते हैं। और जिसने भी जीवन की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये धन का उपयोग किया है, अपव्यय नहीं किया है—उसका जीवन सुखी-कृत्रिम आवश्यकतायें बड़ा लेने अथवा अपनी स्थिति से अधिक प्रदर्शन करने के लिए हमें अपनी सामर्थ्य से ज्यादा खर्च करना पड़ता है। आज मिथ्या फैशन के नाम पर समाज में होड़ लगी है। फैशन के नाम पर कितना भी खर्च करने में हम नहीं हिचकिचाते। इसके कारण न जाने कितने लोगों को

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जीवन निर्वाह की कठिनाइयाँ उठानी पड़ती हैं। फैशन वालों की पारिवारिक दशा बड़ी दयनीय मिलेगी।

फैशन के व्यसन से आज स्त्री और पुरुष दोनों ही ग्रस्त हैं। स्त्रियों में फैशन बढ़ावे के कारण न केवल अपव्यय हो रहा है बल्कि अङ्ग प्रदर्शन फैशन का अङ्ग बन गया है और हमारे नैतिक मूल्यों पर बड़ा गहरा असर पड़ रहा है। परिवार में झगड़े भाई-भाई में कटुता आदि बुराइयां इस धन के लालच और लालसा के कारण पनपती जा रही हैं।

विद्यार्थी वर्ग इससे अछूता नहीं बचा है बल्कि उनमें फैशन और दिखावे की लालसा बड़ी विस्तृत होती जा रही है। मां बाप जो अपने बच्चों के फैशन की पूर्ति नहीं कर सकते, उनकी बुरी आदतों की पूर्ति के लिये पैसा नहीं दे सकते वे बच्चों की निगाह में गिरे हुए हैं या फिर आर्थिक सङ्कट सहा रहे हैं।

वस्त्रों की आवश्यकता इसलिये होती है कि हम अपने शरीर को ढक सकें। सर्दी-गर्मी से शरीर का बचाव कर सकें और यह साधारण मूल्य के कपड़े से सम्भव है। गांधी जी तो खादी की एक धोती और एक चद्दर में ही काम चला लेते थे। सन्त महात्मा एवं महापुरुषों का काम थोड़े से कपड़ों से ही चल जाता है। फिर क्या आवश्यकता पड़ जाती है कि हम लोग बड़ा मँहगा कीमती कपड़ा खरीदें और उसे नई तर्जों एवं डिजायनों में बनवायें।

हम पेट भरने के लिये नहीं खाते, अपने स्वाद के लिए और बड़प्पन जताने के लिए मिठाइयां, पक्वान्न, चाट पकोड़ी न जाने क्या उड़ाते हैं और अपनी कमाई का पैसा गँवाते हैं, साथ ही इसके कारण बीमारियों के शिकार होकर, डाक्टर, वैद्य, हकीमों के पास जाते हैं फिर दवाओं के नाम पर खर्च करते हैं। यदि आदमी पेट भरने की दृष्टि से ही खाए तो बहुत कम खर्च में काम चल सकता है।

तथाकथित "जीवन स्तर" स्टैण्डर्ड आफ लिविङ्ग" की प्रचलित व्याख्या हीं यह हो गई है कि मनुष्य कितना कीमती वस्त्र पहनता है, खाने पीने, मौज-मजे करने में कितना अधिक खर्च करता है। समाज में ब्याह शादी दावत-भोज आदि के नाम पर कौन कितना धन फूकता है। इसके आधार

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पर ही उसका बड़प्पन आंका जाता है। इस सबके कारण मनुष्य दिन रात कमाने की फिक्र में लगा रहता है।

वस्त्र मंहगे भोजन और व्याह शादियों में बड़प्पन जताने की तरह ही स्त्रियों में आभूषण का भी एक नशा रहता है। परिवार में प्रत्येक स्त्री अपने पास आभूषणों की संख्या को अपनी प्रतिष्ठा और मान सम्मान का आधार मानती है। घर के अन्य आवश्यक कार्यों की उपेक्षा कर वे अपने पति से अमुक डिजायनों का इतनी कीमत का आभूषण बनबाने के लिए जिद करती हैं घर की आर्थिक स्थिति बैसा आभूषण बनवाने की नहीं हैं तो या तो कर्ज लें और घर की अर्थ व्यवस्था को चौपट करे अथवा पत्नी को नाराज कर गृह कलह को आमन्त्रित करें।

यह केवल मूढ़ लोगों का ही दृष्टिकोण होता है कि फैशन जेवर या व्यसन बड़प्पन अमीरी का चिह्न है। वस्तुतः यह अबुद्धिमत्ता और मूढ़ मति होने का चिह्न है समाज में धन का उद्धत प्रदर्शन करने वालों की नही सादगी सुसज्जा और सुरुचि पूर्ण ढंग से काम करने वाले सद्गुणी व्यक्तियों की प्रतिष्ठा होती है।

हम जिस ढङ्ग से इतना ज्यांदा पैसा खर्च करते हैं, अनावश्यक बातों के लिये, अगर उनके उचित अनुचित परिणामों पर सन्तुलित रूप से विचार करें और उस अपव्यय को रोक कर उसी पैसे को अच्छे व्यवसाय, काम शिक्षा या समाज उत्थान के कार्यों में लगायें तो न केवल मुनाफा प्राप्त होगा हमारी शारीरिक मानसिक और सामाजिक उन्नति भी हो सकती है। दर-असल हम जितनी आवश्यकतायें बढ़ाते हैं परेशानियाँ उतनी ही बढ़ती जाती हैं और उनकी पूर्ति के लिये उचित अनुचित साधनों का प्रयोग करना पड़ता है। प्रत्यक्ष में इसके परिणाम बेईमानी, घूस, चोरी, हत्या, गृह कलह आदि के रूप में देख रहे हैं।

समाज में अधिकांश आर्थिक अपराधों की जड़ धन का यह उद्धत और अविवेकपूर्ण प्रदर्शन ही है जिन लोगों को वैसे साधन और वैसे अवसर

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उपलब्ध नहीं हो पाते अपने से अमीर व्यक्तियों के पास उपलब्ध होते हैं तो वे भी उन साधनों को प्राप्त करने के लिए ललक उठते हैं। वह ललक इतनी तीव्र होती है कि व्यक्ति जिस किसी भी ढंग से सम्भव हो—उचित या अनुचित हर ढंग से उसे प्राप्त कर लेना चाहता है। ईमानदारी और मेहनत से कमाने के लिए लम्बी प्रतीक्षा करनी पड़ती है। यद्यपि आर्थिक उत्कर्ष का सही आधार यही है और उसी से ठोस प्रगति होती है परन्तु देखा देखी अपने को सुविधा सम्पन्न बनाने के लिए व्यक्ति उचित अनुचित का अन्तर नही करता और आर्थिक भ्रष्टता के गर्त में जा गिरता है।

सम्पन्न हो या निर्धन–अपव्यय तो किसी को नहीं करना चाहिए। अपव्यय व्यक्तिगत दृष्टि से भी और सामाजिक दृष्टि से भी–अनर्थकारी ही है इसलिए कहावत है कि धन कमाना सरल है पर उसे खर्च करना कठिन है।" साधारण अर्थ में तो यह कहावत हास्यास्पद मालूम पड़ती है। कोई भी कह उठेगा कि–खर्च करने में क्या है चाहे जितना पैसा हो उसे खर्च कर दूँ। लेकिन बात ऐसी नहीं है कहावत अपने आप में अर्थ शास्त्र का महत्वपूर्ण सूत्र है जो कहां किस तरह व्यय किया जाय इस सम्बन्ध में जन साधारण के अज्ञान की ओर संकेत करती है।

सादगी को भारतीय जीवन में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। इसी व्रत को अपना कर हमारे पूर्वजों ने ज्ञान की महान् साधना की। उस ज्ञान की जिसके कारण समस्त ससार में भारत को सभ्यता का सूर्य ज्ञान विज्ञान का देश माना जाता रहा और जिसके बल पर वह जगद् गुरु कहलाया।

सादगी एक ऐसा नियम है जिसके सहारे हम अपने वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन की बहुत- सी समस्या को सहज ही हल कर सकते हैं। सादगी के द्वारा अपना बहुत-सा समय, धन खर्च होने वाली शक्तियां बचा सकते है और उनका अपने उत्कर्ष के लिये सदुपयोग कर सकते हैं।

इसीलिये हमारे पूर्वजों ने जीवन के बाह्य विभाग को कम महत्व दिया है। सादगी से जीवन बिताने के लिए कहा है ताकि हम अपनी शक्ति व्यर्थ नष्ट न कर उसका सदुपयोग अच्छे कार्यों में कर सकें। ऋषियों का जीवन इसी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

सत्य का प्रतीक था और किसी भी महान् पथ का साधन करने वाले महापुरुष को सादगी का मार्ग ही अपनाना पड़ता है। जीवन के महान लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उल्लेखनीय सफलताओं के लिए यही मार्ग हर व्यक्ति को अपनाना होगा-अपनाना चाहिए भी।

मनुष्य को प्राप्त असंख्य विभूतियां यदि ठीक प्रकार नियोजित की जा सके तो क्या व्यक्तिगत क्या सामाजिक हर क्षेत्र में स्वर्गीय परिस्थितियां उत्पन्न की जा सकती है। यह तथ्य समझने में हमारी बुद्धि अक्षम नहीं है। किन्तु तथ्यों को समझना एक बात है उसे चरितार्थ करना दूसरी। विभूतियों को सही दिशा में नियोजित करना संयम साधना के बिना संभव नही। अस्तु संयम वृत्ति का विकास सयम साधना का अभ्यास हम जितनी अधिक तत्परता से कर सकें आत्म कल्याण एवं जन कल्याण की दिशा में उतनी ही अधिक प्रगति कर सकेंगे।

मुद्रक--युग निर्माण प्रेस मथुरा।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

संस्थापक एवं सूत्र-संचालक

मिशन के संस्थापक एवं सूत्र संचालक वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं० श्रीराम शर्मा आचार्य । वर्तमान निवास—शांति कुंज, हरिद्वार । आयु ७० वर्ष के लगभग । भारतीय संस्कृति का अगाध अवगाहन । अन्यान्य धर्मों एवं दर्शनों का गम्भीर अध्ययन । विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय का अद्भुत प्रयास । चारों वेद, १०८ उपनिषद् छै हौं दर्शन, बीस स्मृतियाँ, ब्राह्मण, आरण्यक, सूत्रग्रंथ, १८ पुराण आदि आर्ष साहित्य का अनुवाद, प्रकाशन एवं प्रसार । २४ वर्ष तक कठोर तपपूर्वक २४ गायत्री महापुरश्चरणों की तपश्चर्या । अद्भुत आध्यात्मिक शक्तियों के पुञ्ज । गायत्री-विद्या के तत्वदर्शी । साधना-क्षेत्र में लाखों व्यक्तियों के मार्गदर्शक, प्रेरक एवं सहायक । स्वतन्त्रता संग्राम के नैष्ठिक सेनानी, उसके अन्तर्गत कई बार के जेलयात्री । विद्वता एवं बाल सुलभ सौम्यता का अद्भुत समन्वय । एक बार मिलते ही गहन अपनत्व स्थापित कर लेने का जादुई व्यक्तित्व ।

इस पुस्तक के लेखक पं० श्रीराम शर्मा आचार्य। सहयोगिनी प्रतिच्छाया—स्नेह सलिला माता भगवती देवी शर्मा—गुरुदेव के हर कार्य में एक हाथ की तरह ।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

युग निर्माण मिशन–संक्षिप्त परिचय

उद्देश्य—मनुष्य में देवत्व का उदय, धरती पर स्वर्ग का अवतरण। व्यक्ति निर्माण, परिवार निर्माण, समाज निर्माण। विचार-क्रान्ति, नैतिक क्रान्ति, सामाजिक क्रान्ति। जन-मानस का भावनात्मक परिष्कार।

गठन—नव निर्माण के लिए तत्पर नित्य श्रमदान और अंशदान करने वाले पांच लाख कर्मनिष्ठों का पारिवारिक गठन। दस-दस की टोलियाँ उत्कृष्ट चिन्तन और आदर्श कर्तृत्व के लिए निरत। प्रचारात्मक, रचनात्मक और सुधारात्मक कार्यक्रमों द्वारा मानवीय गरिमा को उभारने वाली गतिविधियों में संलग्न समुदाय।

आधार—सदस्यों का दैनिक श्रमदान, अंशदान। दस पैसा नित्य और एक घण्टा समय का नियमित अनुदान। इसी सामर्थ्य के बलबूते अनेकों अति महत्वपूर्ण गतिविधियों का गत ३० वर्ष से संचालन।

संस्थान—(१) गायत्री तपोभूमि, मथुरा (२) युग-निर्माण योजना, मथुरा (३) शांतिकुंज हरिद्वार (४) ब्रह्मवर्चस् हरिद्वार।

प्रकाशन—छै मासिक, एक पाक्षिक तथा एक साप्ताहिक का नियमित प्रकाशन। ग्राहक—संख्या लाखों में। जीवन साधना के सन्दर्भ में ४०० पुस्तकों का प्रकाशन देश की कई महत्वपूर्ण भाषाओं में निजी प्रेस द्वारा।

गतिविधियाँ व प्रचार—धर्मतन्त्र से लोकशिक्षण, अग्नि साक्षी में सत्प्रवृत्तियाँ अपनाने के संकल्प, रामायण व गीता के माध्यम से लोकशिक्षण। एक सौ–पूर्ण समयदानी, सुयोग्य, सुसंस्कृत प्रचारकों का संगठन। दस-दस दिवसों के जीवन–साधना शिविर। युग निर्माण विद्यालय मथुरा, महिला जागरण एवं कन्या विद्यालय हरिद्वार, ब्रह्मवर्चस साधना हरिद्वार। स्लाइड प्रोजेक्टर व टेप रिकार्डरों द्वारा युग सन्देश का विस्तार। कार्यक्षेत्र समस्त भारतवर्ष व विदेशों में प्रवासी भारतीय।

: युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य- संक्षिप्त परिचय :

ज्यादा जानकारी यहाँ से प्राप्त करें :
http://hindi.awgp.org/about_us

- **विचारक्रान्ति अभियान के प्रणेता :** विचारों को परिस्कृत और ऊँचा उथाने मे समर्थ 3000 से भी अधिक पुस्तकों के लेखन के माध्यम से विश्वव्यापी विचार क्रान्ति अभियान की शरुआत की ।
- **वेद, पुराण, उपनिषद के प्रसिद्ध भाष्यकार :** जिन्हों ने चारों वेद, 108 उपनिषद, षड दर्शन, 20 स्मृतियाँ एवं 18 पुराणों का युगानुकूल भाष्य किया, साथ ही 19 वाँ प्रज्ञा पुराण की रचना भी की ।
- **3000 से अधिक पुस्तकों के लेखक :** मनुष्य को देवता समान, घर-परिवार को स्वर्ग, समाज को सभ्य और समग्र विश्वराष्ट्र को श्रेष्ठ बनाने मे समर्थ हजारों पुस्तकें लिखकर समयानुकूल समर्थ मार्गदर्शन प्रदान किया ।

- **युग-निर्माण योजना के सूत्रधार :** जिन्होंने शतसूत्री युग निर्माण योजना बनाकर नये युग की आधार शिला रखी ।
- **वैज्ञानिक-अध्यात्मवाद के प्रणेता :** जिन्हों ने धर्म और विज्ञान के समन्वय की प्रथम प्रयोगशाला 'ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान' स्थापित कर सिद्ध किया कि "धर्म और विज्ञान विरोधी नहीं, पुरक है"।
- **'२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' के उद्घोषक :** जिन्हों ने '२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' का नारा दिया तथा युग विभीषिकाओं से भयग्रस्त मनुष्यता को नये युग के आगमन का संदेश दिया ।
- **स्वतंत्रता संग्राम के कर्मठ सैनानी :** जिन्हों ने महात्मा गाँधी, मदन मोहन मालवीय, गुरुवर रविन्द्रनाथ टैगोर के साथ राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया एवं स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी "श्रीराम मत्त" के रुप में प्रख्यात हुए ।
- **गायत्री के सिद्ध साधक :** जिन्हों ने गायत्री और यज्ञ को रुढियों और पाखण्ड से मुक्त कर जन-जन की उपासना का आधार तथा सद्बुद्धि एवं सतकर्म जागरण का माध्यम बनाया ।
- **तपस्वी :** जिन्होंने गायत्री की कठोरतम साधना कर २४-२४ लाख के २४ महापुरश्चरण २४ वर्षों में सम्पन्न किया । प्रकृति प्रकोप को शांत कर अनिष्टों को टाला, सृजन सम्भावनाओं को साकार किया ।
- **अखिल विश्व गायत्री परिवार के जनक :** जिन्हों ने अपने जीवनकाल में ही अपने साथ करोडों लोगों को आत्मियता के सूत्र में बाँधकर विश्व व्यापी 'युग निर्माण परिवार' - 'गायत्री परिवार' का गठन किया ।
- **समाज सुधारक :** जिन्हों ने नारी जागरण, व्यसन मुक्ति, आदर्श विवाह, जाति-पाँति प्रथा तथा परंपरागत रुढियों की समाप्ति हेतु अद्भूत प्रयास किए एवं एक आदर्श स्वरुप समाज में प्रस्तुत किया ।
- **ऋषि परम्परा के उद्धारक :** जिन्हों ने इस युग में महान ऋषियों की महान परंपराओं की पुनर्स्थापना की । लुप्तप्राय संस्कार परंपरा को पुनर्जीवित कर जन-जन को अवगत कराया ।
- **अवतारी चेतना :** जिन्होंने "धरती पर स्वर्ग के अवतरण और मनुष्य में देवत्व के जागरण" की अवतारी घोषणा को अपना जीवन लक्ष्य बनाया और चेतना का ऐसा प्रवाह चलाया कि करोंडों व्यक्ति उस ओर चल पड़े ।

गायत्री परिवार जीवन जीने कि कला के, संस्कृति के आदर्श सिद्धांतों के आधार पर परिवार,समाज,राष्ट्र युग निर्माण करने वाले व्यक्तियों का संघ है। **वसुधैवकुटुम्बकम्** की मान्यता के आदर्श का अनुकरण करते हुये हमारी प्राचीन ऋषि परम्परा का विस्तार करने वाला समूह है गायत्री परिवार। एक संत, सुधारक, लेखक, दार्शनिक, आध्यात्मिक मार्गदर्शक और दूरदर्शी युगऋषि पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा स्थापित यह मिशन युग के परिवर्तन के लिए एक जन आंदोलन के रूप में उभरा है।

Free Download Complete Work Of Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya, Founder of All World Gayatri Pariwar
Books, Magazines, Articles, Stories, Poems, Great Personalities and many more at
www.vicharkrantibooks.org | www.awgp.org